चतुर्थ अध्याय
मानवेतर प्राणियों का चित्रण

चतुर्थ अध्याय

मानवेतर प्राणियों का चित्रण

यह सम्पूर्ण विश्व भगवदीय शक्ति से परिव्याप्त है। चराचर जो भी प्राणी है, सब में भगवान् का अधिष्ठान है। अतः यह अखिल जगत् भी भगवत्स्वरूप ही है। इसीलिये गोस्वामी तुलसीदास ने जगत् के जड़ और चेतन जीवों को राममय मानकर उनकी वन्दना की है। उनकी दृष्टि विशाल थी। उनके हृदय में मानवेतर प्राणियों के प्रति प्रेम एवं आदर भावना थी। उन्होंने मानव से मानवेतर प्राणियों का सम्बन्ध अटूट माना है। उन्होंने रामचरितमानस में मनुष्यों के साथ ही राक्षस, वानर, भालू, पशु, पक्षी, नाग, प्रेत, पितर, देवता, गन्धर्व, किन्नर एवं समुद्र जैसे मानवेतर प्राणियों को समाविष्ट किया है। उन्होंने रामचरितमानस में मानवेतर प्राणियों का चित्रण इस प्रकार किया है :

[1] राक्षस :

राक्षस अत्यन्त शक्तिशाली एवं पराक्रमी थे। वे विशाल-बाहु थे। उनके शरीर बलिष्ठ, भारी एवं भयानक थे। उनके दौड़ने से शेषनाग काँपते थे और उनके धक्कों से पर्वत भी हिल जाते थे :

तुलसी जिन्हैं धाए धुकँ धरनी धर,
धौर धकानि सों मेरु हले हैं। [1]

राक्षस मायावी थे। वे आसुरी माया जानते थे :

कामरूप जानहिं सब माया।
सपनेहुँ जिन्ह कें धरम न दाया॥ [2]

वे माया से अनेक प्रकार के शरीर धारण करके उपद्रव किया करते थे :

करहिं उपद्रव असुर निकाया।
नाना रूप धरहिं करि माया॥ [3]

राक्षस कामी थे। वे देवता, यक्ष, किन्नर, मनुष्य और नागों की कन्याओं का अपहरण करते थे। उनकी दृष्टि पराये धन एवं परायी स्त्रियों पर रहती थी। वे दूसरों से द्रोह करते थे तथा परायी निन्दा में रत रहते थे। वे माँसाहारी थे तथा भैंसों, मनुष्यों, गायों, गधों और बकरों को खाते थे :

कहुँ महिष मानुष धेनु खर अज खल निसाचर भच्छहीं। [4]

राक्षसों की प्रवृत्ति देव, धर्म एवं वेद-विरोधी थी। वे निर्दयी, दुराचारी एवं पाप कर्मी थे तथा यज्ञों का विध्वंस करते थे। वे उन्हीं कार्यों में रत रहते थे; जिनसे धर्म का निर्मूलन हों। वे जिस-जिस स्थान में गो और ब्राह्मणों को पाते थे उस नगर, गाँव या पुर में आग लगा देते थे :

जेहि बिधि होइ धर्म निर्मूला।
सो सब करहिं बेद प्रतिकूला॥
जेहिं जेहिं देस धेनु द्विज पावहिं।
नगर गाऊँ पुर आगि लगावहिं॥ [5]

राक्षस स्वभावतः दुःख देनेवाले थे। वे सन्त महात्माओं से जबरन् अपनी सेवा करवाते थे। वे तपस्या से शक्ति प्राप्त करके उसका दुरुपयोग करते थे। वे प्रजा का भक्षण, देवताओं का धर्षण (तिरस्कार), ऋषिमुनियों के आश्रमों का विध्वंस तथा परायी स्त्रियों का बारम्बार हरण करते थे :

प्रजानां भक्षणं चापि देवानां चापि धर्षणम्।
आश्रमध्वंसनं चापि परस्त्रीहरणं भृशम्॥ [6]

कई राक्षसों का तो काम ही दण्डकारण्य में धर्मानुष्ठान में लगे हुये तापसों को मार कर उनका रक्त पीना और माँस खाना था :

निहत्य दण्डकारण्ये तापसान् धर्मचारिणः।
रुधिराणि पिबंस्तेषां तन्मांसानि च भक्षयन्॥ [7]

इस प्रकार राक्षसों ने सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का जीवन उत्पीड़ित एवं अशान्तिमय बना दिया था। उनका अधिपति त्रैलोक्य-विजेता बलाढ्य रावण था।

1. रावण :

रावण राक्षस संस्कृति का प्रणेता है। वह अपने बुद्धि, बल एवं साहस से राक्षस कुल का अधिपति बनता है और अपने पराक्रम से दिग्पालों तक को परास्त कर देता है। वह अपनी संस्कृति का विकास करके उसका प्रसार विंध्याचल के दक्षिण में एवं दण्डकारण्य में करता है।

राक्षसराज रावण ब्रह्माजी का प्रपौत्र है। ब्रह्माजी के पुत्र पुलस्त्य, पुलस्त्य के पुत्र विश्रवा एवं विश्रवा के पुत्र रावण है। उसकी माता का नाम कैकसी है। कैकसी के चार सन्तानें हैं- रावण, कुंभकर्ण एवं विभीषण नामक तीन पुत्र और शूर्पणखा नामक एक अति सुन्दर पुत्री। रावण के बीस भुजायें एवं दस सिर हैं।

(क) तपस्या से शक्ति-प्राप्ति :

वह घोर तपस्या करके ब्रह्मा से वर प्राप्त करता है कि मनुष्य और वानर इन दो जातियों को छोड़कर वह अन्य किसी के हाथों से नहीं मारा जायेगा। उसने तपस्या से अद्‌भुत शक्ति प्राप्त की है। उसने अपने बाहुबल से यक्षों को भगाकर सुरम्य लंका नगरी में अपनी राजधानी स्थापित की। उसने यक्षाधिपति कुबेर को परास्त करके उससे पुष्पक विमान छीन लिया। उसकी शक्ति एवं पराक्रम असीम था। उसने खिलवाड़ में ही कैलाश पर्वत को उठा लिया था। उसने मय दानव की अति सुन्दर एवं लावण्यमयी पुत्री मन्दोदरी का वरण किया और पूर्ण वैभव के साथ भव्य प्रासादों में वह ऐश्वर्य भोगने लगा।

(ख) रावण का वेद-विद्या-प्रेम :

रावण सभी विद्याओं का ज्ञाता था। उसने विद्वानों के सानिध्य में रह कर सभी विद्याओं पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया था। वह विद्या-प्रेमी था। वह ब्राह्म मुहूर्त में सभी छः अंगों के साथ वेदज्ञ विद्वानों एवं याज्ञिकों के मन्त्रोच्चारण सुनता था तथा कर्ण-प्रिय मांगलिक वेद वाक्यों को सुन कर जगता था :

षडंगवेदविदुषां क्रतुप्रवरयाजिनाम्।
शुश्राव ब्रह्मघोषान् स विरात्रे ब्रह्मरक्षसाम्॥ 8

(ग) क्षात्र-वृत्ति का आश्रय :

यद्यपि रावण ब्राह्मण था; लेकिन उसने क्षात्र-वृत्ति को अपना लिया था। रावण की मृत्यु पर राम शोक-मग्न विभीषण को धीरज बँधाते हुये कहते हैं; ''रावण को जो गति प्राप्त हुई है, वह पूर्व काल के महापुरुषों द्वारा बताई गई उत्तम गति है। क्षात्र-वृत्ति का आश्रय लेनेवाले वीरों के लिये तो यह बड़े आदर की बात है। क्षत्रिय-वृत्ति से रहने वाला वीर पुरुष यदि युद्ध में मारा गया, तो वह शोक के योग्य नहीं है, यही शास्त्र का सिद्धान्त है'' :

इयं हि पूर्वैः संदिष्टा गतिः क्षत्रिय सम्मता।
क्षत्रियो निहतः संख्ये न शोच्य इति निश्चयः॥ 9

(घ) देवताओंका शत्रु एवं धर्म-विरोधी :

रावण का शासन देवताओं एवं सज्जनों के लिये अभिशाप है। उसके शासन काल में पराये धन और परायी स्त्री को हथियाने वाले दुष्ट चोर और जुआरी बहुत बढ़ जाते हैं। जगह-जगह माता-पिता और देवताओं का अपमान होने लगता है। रावण

के बल का आश्रय पाकर राक्षस साधुओं से जबरदस्ती सेवा करवाने लगते हैं :

बाढ़े खल बहु चोर जुआरा।
जे लंपट पर धन परदारा॥
मानहिं मातु पिता नहि देवा।
साधुन्ह सन करवावहिं सेवा॥ [10]

रावण देवताओं का परम शत्रु है। वह देवताओं के बल एवं महत्त्व को बढ़ाने वाले ब्राह्मण-भोजन, यज्ञ-हवन और श्राद्ध आदि क्रियाओं में बाधा डालने का आदेश देता है:

द्विज भोजन मख होम सराधा।
सब के जाइ करहु तुम्ह बाधा॥ [11]

वह अपने पुत्र मेघनाद को युद्धोन्माद के लिये प्रेरित करके देवताओं को परास्त करने हेतु उत्तेजित भी करता है।

(ङ) अतुलनीय बलवान :

रावण अद्वितीय वीर है। उसे अपनी भुजाओं पर विश्वास है। उसे अपनी शक्ति पर गर्व है। जब वह राम से युद्ध के लिये प्रयाण करता है, तो ऐसा प्रतीत होता है मानो काजल के समान आँधी चली आ रही है। जब यह प्रचण्ड वीर राम से युद्ध करता है,तो उसे देखने के लिये ब्रह्मा, शिव, देवता सिद्ध एवं मुनि विमानों पर सवार होकर आते हैं। उसका शरीर वज्र-तुल्य सुदृढ है। वानर सेना जब उस पर पेड़, पत्थर और पर्वतों से प्रहार करती हैं; तो पर्वत उसके शरीर से टकरा कर टुकड़े-टुकड़े हो जाते हैं। वह अचल खड़ा रह कर वानर सेना को मसलने लगता है। वानर सेना उससे भयभीत होकर भाग जाती है।

वह युद्ध से पीछे हटना भी अपमानजनक मानता है। अचेतावस्था में उसे युद्ध से हटाने पर वह सारथी को फटकारता है। उसका मनोबल ऊँचा है। वह अन्तिम समय में भी राम को ललकारता रहता है :

गर्जेउ मरत घोर रव भारी।
कहाँ रामु रन हतौं पचारी॥ [12]

(च) रावण का वैभव :

रावण की राजधानी लंका बाग-बगीचों के कारण अत्यन्त सुरम्य थी। अशोक-वाटिका एवं उसके सरोवरों और बावड़ियों के सौन्दर्य को देख कर हनुमान के समान विरक्त

भी अनुरक्त एवं आकर्षित हो जाते हैं :

देखे बर बापिका तड़ाग बाग की बनाव,
राग बस भो बिरागी पवनकुमार सो॥ [13]

रावण के महल में ब्रह्मा नित्य वेद-पाठ करते हैं, शिवजी डर के मारे स्वयं ही अपने को रावण से पुजवाने के लिये आते है और देवता तथा दानव अति दीन एवं दुःखी हो कर प्रतिदिन रावण को दूर से ही सिर झुकाते हैं :

बैद पढ़ैं बिधि, संभु सभीत पुजावन रावन सो नित आवैं।
दानव देव दयावने दीन दुखी दिन दूरिहि ते सिर नावैं॥ [14]

(छ) कुशल राजनीतिज्ञ :

रावण कुशल राजनीतिज्ञ है। अंगद जब दूत बनकर रावण के दरबार में जाते हैं, तब रावण भेद-नीति का आश्रय लेता है।वह बालि के प्रति मित्रता का भाव दर्शाते हुये उसकी कुशल पूछता है। वह अपनी कूटनीति के द्वारा बालि के महत्त्व के आधार पर अंगद को तपस्वियों का दूत होने के लिये उपालंभ देता है।

रावण समयानुकूल शीघ्र निर्णय में चतुर है। जब उसे अपने गुप्तचरों से पता चलता है कि हनुमान संजीवनी बूटी लाने हेतु द्रोणागिरि पर्वत की ओर जा रहे हैं, तो वह कालनेमि को उनके मार्ग में विघ्न-बाधा डालने के लिये भेज देता है।

(ज) रावण की मायावी शक्ति :

रावण माया का निर्माण करने में कुशल है। वह रणभूमि में समय-समय पर माया का आश्रय लेता है, जिसे देख कर लक्ष्मण सहित वानर सेना भयभीत हो जाती है। कभी वह करोड़ों रावणों का निर्माण करता है तो कभी अनेक मायावी राम, लक्ष्मण एवं हनुमान प्रकट करता है। कभी वह भयंकर वैताल, भूत, पिशाच एवं योगिनियाँ प्रकट करता है, जो घोर ध्वनि करते हुये मुँह फैला कर वानरों को खाने के लिये दौड़ती हैं। वह वानरों पर बालू बरसाता है। वानरों को उसकी माया के कारण चारों ओर आग जलती हुई दिखाई देती है। उसकी माया की शक्ति 'न भूतो न भविष्यति' है।

(झ) रावण का तान्त्रिक स्वरूप :

रावण बड़ा तान्त्रिक है। उसकी ध्वजा पर तान्त्रिकता का चिन्ह 'नर-सिर-कपाल' (मनुष्य की खोपड़ी) है :

ध्वजं मनुष्यशीर्षं तु तस्य चिच्छेद नैकधा॥ [15]

(ञ) रावण का वाक्-चातुर्य एवं कूटनीति :

रावण कुशल कूटनीतिज्ञ है। जब रावण को बालि काँख में दबा कर किष्किन्धापुरी लाता है,तो उसका सारा गर्व चूर-चूर हो जाता है। तब रावण अपने वाक्-चातुर्य का प्रदर्शन करते हुये, बालि की वीरता की भूरि भूरि प्रशंसा करके उससे मैत्रि-सन्धि कर लेता है। रावण कहता है, ''कपि-श्रेष्ठ! मैंने आपका बल देख लिया है। अब मैं अग्नि को साक्षी बना कर आपके साथ सदा के लिये स्नेहपूर्ण मित्रता करना चाहता हूँ'' :

सोऽहं दृष्टबलस्तुभ्यमिच्छामि हरिपुंगव।
त्वया सह चिरं सख्यं सुस्निग्धं पावकाग्रत:॥ [16]

तदनन्तर राक्षसराज रावण अग्नि प्रज्वलित करके बालि को हृदय से लगा कर भाईचारे का सम्बन्ध जोड़ लेता है।

(ट) ध्वंसात्मक दृष्टिकोण :

रावण का दृष्टिकोण ध्वंसात्मक है, जब कि राम अंगद को लंका भेजते समय कहते हैं, ''शत्रु से वही बातचीत करना जिससे हमारा कार्य हो और उसका कल्याण हो'' :

काजु हमार तासु हित होई।
रिपु सन करेहु बतकही सोई॥ [17]

वहीं रावण राक्षसों को आदेश देता है, ''इस पृथ्वी को वानर-विहीन करके राम-लक्ष्मण को जीवित पकड़ लो :

मर्कटहीन करहु महि जाई।
जिअत धरहु तापस द्वौ भाई॥ [18]

राम के वचन से समत्व एवं सर्वहित का बोध होता है। वे शत्रु का भी आत्मवत् हित-चिन्तन कर रहे हैं; लेकिन रावण का दृष्टिकोण ठीक इसके विपरीत ध्वंसात्मक है।

(ठ) शक्ति का दुरुपयोग :

रावण का अर्थ होता है रुलाने वाला। वह त्रैलोक को रुलाने वाला, भयंकर, दुर्जेय और दुर्धर्ष था:-

त्रैल्योक्यरावणं घोरं रावणं राक्षसेश्वरम्। [19]

रावण के भय से अग्नि, वायु, जल, सूर्य, चन्द्र, यम, काल और समस्त लोकपाल कम्पित रहते हैं। ब्रह्मा और विष्णु भी उससे भयभीत रहते हैं। कई राजाओं के लड़के-लड़कियाँ तो उसके पास रेहन रखी हुई हैं:-

साहिब महेस सदा, संकित रमेस मोहि,
महातप साहस बिरंचि लीन्हे मोल है।
तुलसी तिलोक आज दूजो न बिराजै राजा,
बाजे बाजे राजन के बेटा-बेटी ओल है॥ [20]

(ड) रावण की कामुक प्रवृत्ति :

रावण अमर्याद कामी राक्षस है। वह देवता, यक्ष, गन्धर्व, मनुष्य, किन्नर और नागों की सुन्दर स्त्रियों को अपने भुजबल से जीत कर उनसे विवाह कर लेता है।

देव जच्छ गंधर्ब नर किंनर नाग कुमारि।
जीति बरीं निज बाहुबल बहु सुंदर बर नारि॥ [21]

वह परायी स्त्रियों के सतीत्व को नष्ट करनेवाला, महाकामी, अत्याचारी, बलात्कारी है:-

उच्छेत्तारं च धर्माणां परदाराभिमर्शनम्। [22]

वह विवाहिता स्त्रियों का भी अपहरण कर लेता है। वह पाताल की भोगवती पुरी में जाकर नागराज वासुकि एवं तक्षक को परास्त कर तक्षक की प्रिय पत्नी का भी हरण कर लेता है:-

पुरीं भोगवतीं गत्वा पराजित्य च वासुकिम्।
तक्षकस्य प्रियां भार्यां पराजित्य जहार यः॥ [23]

(ढ़) सत्परामर्श की उपेक्षा :

रावण को अपनी शक्ति का अभिमान है, इसलिए वह किसी के भी सत्परामर्श को नहीं मानता। मन्दोदरी उसे सीता को लौटाने के लिए समझाती है। विभीषण भी उसे सन्मार्ग पर लाने के लिए हर संभव प्रयत्न करता है, लेकिन रावण उसे धिक्कारते हुये पाद-प्रहार करके अपनी सभा से निष्कासित कर देता है। उसका विवेकी पुत्र प्रहस्त भी उसे सुमार्ग पर लाने हेतु यथार्थ सलाह देता है; लेकिन वह उसे नहीं मानता। वह अपने नाना माल्यवन्त के सुझाव की भी उपेक्षा करके उसकी भर्त्सना करता है।

(ण) कर्मकाण्ड में आस्था :

रावण ऋषि-मुनियों के यज्ञों का विध्वंस करता है; लेकिन वह स्वयं कर्मकाण्डी है। वह लक्ष्मण के हाथों मूर्च्छित होने के बाद जब मूर्च्छा से जागता है, तब यज्ञ करने लगात हैः-

उहाँ दसानन जागि करि करै लाग कछु जग्य।
राम बिरोध बिजय चह सठ हठ बस अति अग्य॥ [24]

लेकिन वानरों द्वारा यज्ञ का विध्वंस होने पर उसका मनोबल क्षीण हो जाता है।

(त) रावण का अध्यात्म-ज्ञान :

रावण तत्त्व-ज्ञानी है। मेघनाद-वध का समाचार सुन कर जब मन्दोदरी विलाप करने लगती है, तब रावण अपने कुल की आर्त्त-स्त्रियों को समझाते हुये कहता है, "समस्त जगत् का यह रूप नश्वर है" :-

तब दरकंठ बिबिध बिधि समझाई सब नारि।
नस्वर रूप जगत सब देखहु हृदयँ बिचारि॥ [25]

रावण की यह उक्ति उसके अध्यात्मज्ञान की परिचायक है।

(थ) ईश्वरत्व का विरोध :

रावण स्वयं को सर्व शक्तिमान मानता है। उसका ईश्वर नाम की किसी शक्ति पर कोई विश्वास नहीं है। लंका-दहन के समय जब मंत्री यह कहता है कि यह आग नहीं है, वरन् ईश-विमुख रावण के प्रति ईश्वर का कोप है। तब रावण कहता है, "ईश्वर नामधारी ऐसा कौन है जो मुझसे प्रतिकूल हो? हे माल्यवान्! तुम्हारे वचन तो पागलों के समान है" :-

को है ईस-नाम को? जो बाम होत मोहू सी को।
मालवान रावरे के बावरे से बोल है। [26]

(द) शत्रु-भाव से राम-भक्ति :

राक्षसराज रावण अपने उद्धार के लिये वैर भाव से श्रीराम को भजता है। खर-दूषण और त्रिशिरा के वध के उपरान्त उसे विश्वास हो जाता है कि स्वयं के समान इन बलशाली वीरों को भगवान् के अतिरिक्त कोई भी नहीं मार सकता। अतः वह हठ

पूर्वक प्रभु राम से वैर करके उनके बाणों के आघात से प्राण-त्याग कर भवसागर उतरने का निश्चय करता हैः-

सुर रंजन भंजन महि भारा।
जौं भगवंत लीन्ह अवतारा॥
तौ मैं जाइ बैरु हठि करऊँ।
प्रभु सर प्रान तजें भव तरऊँ॥ 27

वह जानता है कि तामस शरीर से भजन संभव नहीं है। अतः वह मन, वचन और कर्म से यही दृढ़ निश्चय करता है।

(ध) नारी-समाज के प्रति असहिष्णु :

रावण के हृदय में नारी-समाज के लिये कोई आदर का भाव नहीं है। वह तो उसे राज्य और वस्त्र की तरह भोग्या समझता है। वह स्त्री-समाज के प्रति अनुदार शब्दों का प्रयोग करते हुये कहता है कि स्त्रियों के हृदय में साहस, झूठ, चंचलता, छल, भय, अविवेक, अपवित्रता और निर्दयता जैसे आठ अवगुण सदा निवास करते हैंः-

नारि सुभाउ सत्य सब कहहीं।
अवगुन आठ सदा उर रहहीं॥
साहस अनृत चपलता माया।
भय अबिबेक असौच अदाया॥ 28

नारी समाज के प्रति अपनी असहिष्णुता के द्वारा उसने अपना रावणत्व प्रकट किया है।

(न) कवि एवं संगीतकार :

रावण केवल योद्धा ही नहीं, वरन् एक भावुक कवि एवं संगीतकार है। उसने पंचम वेद की रचना की है जो 'कृष्ण यजुर्वेद' के नाम से प्रख्यात है।

(प) राजनीति-शास्त्र का उद्भट विद्वान :

निस्सन्देह रावण अपने युग का सर्वश्रेष्ठ विद्वान है, यद्यपि उसने अपनी विद्या का दुरुपयोग किया है। उसके अन्तिम क्षणों के बारे में एक जनश्रुति प्रसिद्ध है। मानव-जाति के लिये ज्ञान-संचय आवश्यक जान कर श्रीराम मरणासन्न रावण के पास राजनीति के सूत्र जानने के लिये लक्ष्मण को भेजते हैं। रावण सभी नीति-सूत्र लक्ष्मण को बता कर वीर-गति को प्राप्त करता है।

2. कुंभकर्ण :

कुंभकर्ण विश्रवा का पुत्र एवं रावण का लघु भ्राता है। उसने तपस्या करके ब्रह्मा से वरदान प्राप्त किया है। वह अपनी कई विशेषताओं के लिये प्रसिद्ध हैः-

(क) विपुल तामसी आहार एवं प्रदीर्घ निद्रा :

उसके शरीर का आकार अत्यधिक विशाल है। उसका दैनिक आहार तामसी एवं विपुल है। वह अनेक भैंसे खाता है और करोड़ों घड़े मद्य पी जाता है। इसीलिये ब्रह्मा की प्रेरणा से सरस्वती इसकी बुद्धि को विपरीत कर देती है। परिणामतः यह छः महिने की निद्रा का वरदान प्राप्त करता है। इसकी प्रदीर्घ निद्रा विश्व-विख्यात है।

(ख) भूधराकार शरीर एवं प्रचण्ड वीर :

कुंभकर्ण आकृति-प्रकृति से साकार काल के सदृश्य है। वह शारीरिक बल में बढ़ा-चढ़ा एवं मायावी हैः-

कुंभकर्णो बलेनासीत् सर्वेभ्योऽभ्यधिकोयुधि।
मायावी रणशौण्डश्च रौद्रश्च रजनीचरः॥ [29]

वह युद्ध के लिये अकेला ही चल पड़ता है, साथ में सेना भी नहीं लेता। वानर सेना उस पर पर्वतों से प्रहार करती है, लेकिन वह रणधीर अडिग खड़ा रहता है। वह वीरवर हनुमान को पृथ्वी पर गिरा देता है और नल-नील आदि योद्धाओं को परास्त कर देता है। वह सुग्रीव को अपनी काँख में दबा लेता है। वह करोड़ों वानरों को पकड़-पकड़ कर खाने लगता है। उन्हें अपने शरीर से मसलता है और पृथ्वी की धूल में मिला देता है। वह क्रोधित होकर पर्वतों को उखाड़ देता है।

(ग) निर्भय व्यक्तित्व-रावण की भर्त्सना :

मेघनाद की वीरघातिनी शक्ति से मूर्च्छित लक्ष्मण जब संजीवनी बूटी के उपचार से उठ बैठते हैं, तो व्याकुल रावण कुंभकर्ण को जगाता है। वह सीता-हरण से युद्ध-प्रसंग तक की घटनाओं का वर्णन करते हुये बताता है कि दुर्मुख, देवान्तक, नरान्तक, अतिकाय; अकम्पन तथा महोदर आदि सभी वीर रणभूमि में खेत रहे हैं। तब कुंभकर्ण दुःखी होकर उसकी भर्त्सना करते हुये कहता है कि जगज्जननी जानकी का हरण करके उसने अच्छा नहीं किया है।

सुनि दसकंधर बचन तब कुंभकरन बिलखान।
जगदंबा हरि आनि अब सठ चाहत कल्यान॥ 30

राक्षसराज रावण की इतनी स्पष्ट भर्त्सना करना बलाढ्य कुंभकर्ण के लिये ही संभव है।

(घ) विभीषण की नीति का समर्थन :

युद्ध-भूमि में विभीषण कुंभकर्ण को सम्पूर्ण घटना-चक्र से अवगत कराते हैं कि किस प्रकार अन्यायी रावण द्वारा अपमानित होकर वे ग्लानि-वश राम की सेवा में पहुँचे हैं। तब कुंभकर्ण उनकी नीति का समर्थन करते हुये कहते है, "हे भाई! तू राक्षस-कुल का भूषण है। तूने शोभा एवं सुख के सागर श्रीराम को भज कर अपने कुल को देदीप्यमान कर दिया है":

धन्य धन्य तैं धन्य विभीषन।
भयहु तात निसिचर कुल भूषन॥
बंधु बंस तैं कीन्ह उजागर।
भजेहु राम सोभा सुख सागर॥ 31

(ड़) राम के परब्रह्म-स्वरूप में आस्था :

कुंभकर्ण को राम के ईश्वरत्व में आस्था है। जब रावण उसे जगाता है तब वह कहता है, "जगदम्बा सीता का हरण करके तूने अच्छा नहीं किया है। राम तो साक्षात् देवाधिदेव है; जिनके शिव, ब्रह्मा आदि देवता सेवक हैं। जिनके हनुमान जैसे सेवक हैं क्या वे रघुनाथजी साधारण मनुष्य हो सकते हैं? अच्छा होता यदि तू पहले ही आकर मुझे यह सब बताता।" फिर वह श्रीराम के रूप और गुणों का स्मरण करते हुये प्रेम-मग्न हो जाता है। वह विभीषण को भी मन, वचन और कर्म से कपट छोड़ कर रणधीर रघुनाथजी का भजन करने का सत्पपरामर्श देता है:-

बचन कर्म मन कपट तजि भजेहु राम रणधीर।
जाहु न निज पर सूझ मोहि भयउँ कालबस बीर॥ 32

(च) कर्तव्यशील व्यक्तित्व :

वह जानता है कि राम परब्रह्म एवं अजेय हैं। वह युद्ध का परिणाम भी जानता है। इसीलिये वह रावण को अन्तिम बार अंक भर कर भेंटने के लिये कहता है। फिर भी वह राम से घोर युद्ध करता है और अन्तिम समय तक रावण की जय-जयकार

करता हुआ उन्हें ललकारता रहता है। इस प्रकार वह अपना कर्तव्य निभाते हुये वीर-गति को प्राप्त होता है। उसके शरीर से निकला हुआ तेज भगवान् राम के मुख में समा जाता है।

3. विभीषण :

विभीषण विष्णु के भक्त एवं ज्ञान-विज्ञान के भण्डार हैं। वे विश्रवा के तृतीय पुत्र एवं राक्षसराज रावण के सौतेले भाई हैं। वे तपस्या करके ब्रह्मा से भगवान् के चरण-कमलों में निष्काम एवं अनन्य प्रेम का वरदान प्राप्त करते हैं। ब्रह्मा से उन्हें अमरत्व का वरदान भी प्राप्त होता है। तद्नन्तर वे तपस्या से विरत हो कर अपने जेष्ठ भ्राता रावण के पास लंका में चले जाते हैं। उनका विवाह राक्षस-कन्या सरमा के साथ होता है। वे भगवद्-भजन करते हुये अपना सात्विक जीवन व्यतीत करने लगते हैं। उनकी चारित्रिक विशेषतायें इस प्रकार हैः-

(क) वैष्णव-धर्म का पालन :

विभीषण अत्यन्त धार्मिक प्रवृत्ति के हैं। उनके महल में भगवान् का एक मन्दिर है। उनके महल की दीवारों पर रामायुध (धनुष बाण) अंकित है। वहाँ नये-नये तुलसी के वृक्ष-समूहों का उपवन है। सीता का अन्वेषण करते समय हनुमान की दृष्टि जब इस मन्दिर पर पड़ती है, तो वे आश्चर्य-चकित रह जाते है। उस समय विभीषण राम-नाम का उच्चारण करते हुये जागते हैं।

(ख) रावण को सत्परामर्श :

विभीषण रावण की सेना के प्रधान सभासद् हैं। वे रावण को उचित परामर्श देते हैं तथा जब भी उसके द्वारा अन्याय होता हुआ दिखाई देता है, वे अपनी असहमति प्रकट करते हुये निर्भीकता से उसका विरोध करते हैं। जब रावण देवताओं एवं नाग-कन्याओं का अपहरण करके लाता है, तब वे उसका प्रतिरोध करते हुये उन पर बलात्कार न करने के लिये समझाते हैं।

(ग) नीति-विशारद-दूत अवध्य :

जब मेघनाद हनुमान को नागपाश से बाँध कर रावण के सम्मुख प्रस्तुत करता है, तब वह राक्षसों को उसे मारने का आदेश देता है। उसी समय नीतिज्ञ विभीषण अपने मंत्रियों सहित राज-सभा में आ जाते हैं। वे रावण को रोकते हुये कहते हैं कि दूत अवध्य होता है, उसे मारना नीति के विरूद्ध है। अतः कोई अन्य दण्ड दिया जाना चाहिये।

(घ) विभीषण की निर्भीकता :

लंका-दहन के पश्चात् रावण को जब शत्रु-सेना के समुद्र के उस पार आगमन की सूचना मिलती है, तब वह चिन्तित हो उठता है और अपने मंत्रियों से मंत्रणा करता है। जहाँ अन्य मन्त्रीगण रावण को प्रसन्न करने के लिये उसका स्तुतिगान करते रहते हैं, वहीं धर्मपरायण विभीषण निर्भीकता से सीता को लौटाने एवं श्रीराम की शरण में जाने का परामर्श देते हैं। उसे सुन कर अभिमानी रावण क्रोधित हो उठता है और वह विभीषण पर पाद-प्रहार कर उसे अपने राज्य से निष्कासित कर देता है।

(ड़) राम के प्रति अनन्य प्रेम :

वे स्वभावत: राम का चिन्तन करने वाले राम-भक्त हैं। उनका राम के प्रति अनन्य प्रेम हैं। वे रावण को सुसज्जित रथ पर आरूढ देख कर तथा श्रीराम को रथ-विहीन देख कर अधीर हो उठते हैं। वे आशंका-ग्रसित हो जाते हैं कि बिना रथ, कवच एवं पदत्राण के विश्व-विजयी रावण को परास्त करना श्री राम के लिए कैसे संभव होगा?:-

नाथ न रथ नहिं तन पद त्राना।
केहि बिधि जितब बीर बलवाना॥ [33]

तब श्रीराम उन्हें धर्ममय रथ का स्वरूप समझाते हैं, जिसके द्वारा जन्म-मृत्यु रूपी महान् दुर्जय शत्रु को भी जीता जा सकता है।

(च) राम की सहायता :

वे समय-समय पर अपने परामर्श द्वारा राम की सहायता करते हैं। वे अपने महल के छज्जे पर आमोद-प्रमोद में रत रावण का रहस्योद्घाटन करते हैं; जिससे राम अपने बाण से रावण के छत्र-मुकुट एवं मन्दोदरी के कर्णफूल काट कर गिरा देते हैं। इस प्रकार राम, रावण के पक्ष में अशुभ कल्पना का निर्माण करके शत्रु-पक्ष के मनोबल को क्षीण करने में सफल होते हैं।

वे रावण एवं मायावी मेघनाद के अपवित्र यज्ञ की सूचना राम को देते हैं। तब लक्ष्मण सहित वानर वीर उन यज्ञों का विध्वंस कर देते हैं। वे ही राम को बताते हैं कि रावण के नाभिकुण्ड में अमृत का निवास है, जिसके बल से वह जीवित है।

(छ) रामाश्रय से निर्भीकता का प्रादुर्भाव :

विभीषण सदैव रावण से भयभीत रहते हैं, लेकिन रामाश्रय पा कर उनमें निर्भीकता का संचार होता है। रावण की विभीषण पर छोड़ी गई भयानक शक्ति जब राम स्वयं सह लेते हैं, तब विभीषण क्रोधित हो कर अपनी गदा का प्रहार रावण की छाती पर करते हैं। रावण पृथ्वी पर गिर पड़ता है और उसके दसों मुखों से रुधिर प्रवाहित होने लगता है। विभीषण रघुनाथजी के प्रभाव से विश्व-विजयी रावण से काल के समान भिड़ जाते हैं और अपनी वीरता का परिचय देते हैं।

(ज) विभीषण का भ्रातृ-प्रेम :

रावण ने हमेशा विभीषण का तिरस्कार किया है। वह उन्हें अपमानित करके पाद-प्रहार से लंका से निष्कासित भी कर देता है। फिर भी रावण की मृत्यु पर परिवार की स्त्रियों के हृदय-विदारक विलाप को सुन कर उनका हृदय भर आता है। वे अपने भाई की दशा पर दुःख से उद्वेलित हो उठते हैं, एवं विधिवत रावण का अन्त्येष्टि-संस्कार करते हैं।

(झ) वानरों के प्रति कृतज्ञता-ज्ञापन :

राम की आज्ञा से लक्ष्मण लंकापुरी में जाकर विभीषण को राज्य-सिंहासन पर सादर अभिषिक्त कर देते हैं। तब विभीषण कृतज्ञता-वश रत्नों एवं वस्त्रों से पुष्पक विमान को भर कर आकाश में इनकी वृष्टि करते हैं। वानर और भालू अपनी इच्छानुसार मणि-माणिक एवं वस्त्रों को ग्रहण कर लेते हैं। इस प्रकार वे अपनी कृतज्ञता का ज्ञापन करते हैं।

(ञ) राम-कृपा से अनुग्रहीत :

विभीषण पर श्रीराम की अत्यन्त कृपा है। लंका से अवधपुरी को लौटते समय श्रीराम के साथ विभीषण की अयोध्या आते हैं। राम अयोध्या में इन्हें अत्यन्त आदर देते हैं और लक्ष्मण अपने हाथों से इन्हें वस्त्राभूषण पहनाते हैं। राम इन्हें कल्प भर राज्य करने के बाद साकेतधाम में निवास करने की अनुमति देते हैं, जहाँ अन्त में सब सन्तों का निवास होता है:-

करेहु कल्प भरि राजु तुम्ह मोहि सुमरेहु मन माहिं।
पुनि मम धाम पाइहहु जहाँ सन्त सब जाहिं।। [34]

(ट) सन्त-समागम में आस्था :

विभीषण की ऐसी मान्यता है कि सन्त-समागम हरि-कृपा का ही सुपरिणाम है। जब बहुत बड़े पुण्य एवं सुकर्म का संचय होता है तब प्रभु की अहेतु की कृपा से संतजनों के दर्शन सुलभ होते हैं। उस पुण्यमय क्षण में, सत्संगति से, ज्ञान के आलोक से जीवन जगमगा उठता है। संत-समागम से मानव का आन्तरिक तमस्र मिट जाता है और विवेक के आलोक में जीवन मुस्करा उठता है। इस सिद्धान्त की पुष्टि विभीषण ने हनुमान-मिलन के प्रसंग में की है :

अब मोहि भा भरोस हनुमंता।
बिनु हरिकृपा मिलहिं नहिं संता॥
जौं रघुबीर अनुग्रह कीन्हा।
तौ तुम्ह मोहि दरसु हठि दीन्हा॥ [35]

(ठ) शरणागत-वत्सल की शरण :

सत्संग के प्रभाव से विभीषण का विवेक जागृत हो जाता है और वे निश्छल भाव से मन, वचन एवं क्रम से राम की शरण ग्रहण कर लेते हैं। वे जानते हैं कि तामसी शरीर से अन्य साधन तो संभव नहीं है, इसलिये वे राम की शरणागत-वत्सलता का आश्रय लेते है :

श्रवन सुजसु सुनि आयउँ प्रभु भंजन भव भीर।
त्राहि त्राहि आरति हरन सरन सुखद रघुबीर॥ [36]

विभीषण की शरणागति के समय राम स्वयं कहते हैं, "जो एक बार भी शरण में आकर मुझ से रक्षा की प्रार्थना करता है, उसे मैं समस्त प्राणियों से अभय कर देता हूँ" :

सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति च याचते।
अभयं सर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद् व्रतं मम॥ [37]

यह शरणागति ही उनकी अक्षय कीर्ति का कारण बनती है। उन्हें वैभव तो इतना मिलता है कि स्वयं राघवेन्द्र उनके ललाट पर तिलक लगाते हैं और वे लंकेश हो जाते है :

अस कहि राम तिलक तेहि सारा।
सुमन बृष्टि नभ भई अपारा॥ [38]

राम की शरणागति के ही फलस्वरूप विभीषण को बड़प्पन एवं दुर्लभ सद्गति प्राप्त होती है।

4. मेघनाद :

मेघनाद रावण का जेष्ठ पुत्र है। वह अत्यन्त वीर है। उसने देवराज इन्द्र को परास्त किया है, इसलिये वह इन्द्रजीत नाम से विख्यात है। उसकी वीरता से देवता सदा भयभीत रहते हैं। उसका जीवन कई चारित्रिक विशेषताओं का समुच्चय है :

(क) प्रचण्ड वीर :

मेघनाद अत्यन्त बलवान है। वह अपनी वीरता से रणभूमि में वानर-भालुओं को व्याकुल कर देता है। लंका के जिस द्वार पर वह युद्ध करता है उसे तोड़ने में वानर सेना को बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ता है। उसकी वीरता के सामने राम की सारी सेना इधर-उधर भाग जाती है। वह युद्ध-भूमि में राम-लक्ष्मण सहित नल, नील, सुग्रीव, अगंद, हनुमान, विभीषण आदि सभी वीरों को ललकारता है। हनुमान जैसा वीर योद्धा भी इसे भयानक योद्धा मानते है :

कपि देखा दारुण भट आवा।
कटकटाइ गर्जा अरु धावा॥ [39]

(ख) शस्त्रास्त्र-ज्ञान में निष्णात :

वह विविध प्रकार के शस्त्रास्त्रों का ज्ञाता है। वह शक्ति, शूल, तलवार, कृपाण, वज्र, फरसे, परिघ एवं पत्थरों के साथ ही अनेक प्रकार के बाणों की वर्षा करने में निष्णात है। वह धनुर्विद्या में पारंगत है। वह लक्ष्मण, हनुमान, अगंद, नल, नील, सुग्रीव एवं विभीषण आदि सभी वीरों के शरीरों को बाण मार-मार कर छलनी कर देता है। उसके बाण सर्प की तरह सभी वीरों को नागपाश में आबद्ध कर देते हैं। वह लक्ष्मण के साथ युद्ध में अपनी वीरघातिनी शक्ति का प्रयोग करके उन्हें अचेत कर देता है। उसे यह ज्ञान है कि किस समय किस प्रकार के शस्त्रास्त्रों का प्रयोग करना चाहिये। उसका यह ज्ञान ही उसकी सफलता का रहस्य है। हनुमान पर अपनी माया का उपयोग न होता देख कर वह ब्रम्हास्त्र के प्रयोग से उन्हें मूर्च्छित करके नागपाश में बाँध लेता है।

(ग) राक्षसी माया का अपूर्व ज्ञाता :

वह विविध प्रकार की मायाओं का ज्ञाता एवं निर्माता है। वह रणभूमि में कभी प्रकट हो जाता है, तो कभी अन्तर्धान। कभी-कभी वह भिन्न-भिन्न रूप धारण करके

युद्ध करता है। वह अपनी माया से कभी वानर सेना पर आग की वर्षा करता है, तो कभी पृथ्वी से जल की धारायें प्रकट करता है। उसकी माया के कारण पिशाच-पिशाचिनियाँ नाच-नाच कर 'मारो', 'काटो' की आवाज करने लगती हैं। वानर सेना पर कभी विष्ठा गिरती है, तो कभी पीब, कभी रक्त, तो कभी बाल और हड्डियों की वर्षा होती है। कभी चारों ओर से पत्थर गिरते हैं, तो कभी धूल की वृष्टि होती है। कभी ऐसा अन्धकार छा जाता है, कि अपना हाथ ही दिखाई नहीं देता है। उसकी माया को देख कर वानर व्याकुल होकर आसन्न मृत्यु की आशंका से ग्रसित हो जाते हैं।

(घ) मेघनाद की पितृ-भक्ति :

राक्षस होते हुये भी वह अपने पिता का आज्ञाकारी पुत्र है। वह अपने पिता की आज्ञा का सदैव सम्मान करता है एवं उसका तुरन्त पालन करता है :

इंद्रजीत सन जो कछु कहेउ।
सो सब जनु पहिलेहिं करि रहेऊ॥ [40]

वह अपने पिता की आज्ञा शिरोधार्य करके देवताओं से युद्ध करके उन्हें पराजित कर देता है।

(ङ) यज्ञ एवं पशु-बलि में आस्था :

यद्यपि मेघनाद यज्ञ-विरोधी है; लेकिन स्वयं को अजेय बनाने के लिये एक गुफा में विशेष यज्ञ का आयोजन करता है, जिसमें वह जीवित कृष्ण छाग (काले रंग के बकरे) की बलि देता है :

छागस्य कृष्णवर्णस्य गलं जग्राह जीवतः। [41]

जब लक्ष्मण सहित वानर वीर उसका यज्ञ-विध्वंस करने जाते है, तो उन्हें वह यज्ञ में रक्त और भैंसे की आहुति देता हुआ दिखाई देता है :

जाइ कपिन्ह सो देखा बैसा।
आहुति देत रुधिर अरू भैंसा॥ [42]

(च) राम के ईश्वरत्व में अनास्था :

रावण, कुंभकर्ण एवं विभीषण आदि सभी वीर राम के व्यक्तित्व से प्रभावित हैं। रावण एवं कुंभकर्ण भी उनके प्रति प्रछन्न आदर-भाव रखते हुये उनके परब्रम्ह-स्वरूप में आस्था रखते हैं। लेकिन पितृ-भक्त मेघनाद राम के प्रभाव से मुक्त है। वह उन्हें केवल वीर ही मानता है, परब्रम्ह का स्वरूप नहीं।

(छ) अन्तिम समय में राम-लक्ष्मण का स्मरण :

वह अन्तिम समय में सब कपट त्याग देता है एवं 'राम कहाँ है?' 'राम के छोटे भाई लक्ष्मण कहाँ है?' ऐसा कह कर लक्ष्मण के हाथों वीरगति को प्राप्त करता है। उसकी वीरोचित मृत्यु पर हनुमान आदि वीर उसकी प्रशंसा करते हुये कहते हैं कि इसकी माता धन्य है, जो वह लक्ष्मण के हाथों मरा एवं मरते समय उसने राम-लक्ष्मण का स्मरण किया :

रामानुज कहँ रामु कहँ, अस कहि छाँडेसि प्राण।
धन्य धन्य तव जननी, कह अंगद हनुमान।। [43]

5. मन्दोदरी :

मन्दोदरी रावण की पटरानी है। वह मय दानव की पुत्री है। वह अत्यन्त सुन्दर एवं पतिव्रत-धर्म में आस्था रखनेवाली स्त्रियों में शिरोमणि है। उसका उल्लेख पतिव्रता स्त्रियों में आदर के साथ किया जाता है। वह कई चारित्रिक गुणों से विभूषित है :

(क) इतिहास-पुराण का विशद् ज्ञान :

उसका इतिहास-पुराण का ज्ञान व्यापक है। उसे विष्णु के विभिन्न अवतारों का पूर्ण ज्ञान है। वह कहती है कि भगवान् ने विष्णु रूप से अत्यन्त बलवान मधु और कैटभ नामक राक्षस मारे हैं। उन्होंने वराह रूप धारण करके हिरण्याक्ष एवं नृसिंह-रूप से हिरण्यकशिपु का संहार किया है। उन्होंने वामन-रूप धारण करके राजा बलि को बाँधा है और परशुराम के रूप में सहस्त्रबाहु का विनाश किया है। वे ही भगवान् पृथ्वी का भार उतारने के लिये इस समय राम-रूप में अवतरित हुये हैं।

(ख) रावण को सत्परामर्श :

मंदोदरी समय-समय पर रावण को सन्मार्ग पर लाने हेतु उसे सत्परामर्श देती है। जब राम-लक्ष्मण वानरों की सेना सहित समुद्र के उस पार पहुँच जाते हैं, तब राक्षसों को भयभीत देख कर वह रावण को समझाती है। वह कहती है कि जिस सीता का वे अपहरण करके लाये हैं, वह राक्षस-कुल के लिये घातक है। अतः वे सीता को लौटा दें अन्यथा शिव एवं ब्रम्हा की सहायता लेने पर भी उनका कोई भला नहीं होने वाला है।

(ग) राम के प्रभाव से अवगत :

वह राम के प्रभाव से परिचित है। वह जानती है कि राम के सामने रावण

का प्रभाव नगण्य है। वह कहती है कि वेर उसी के साथ करना चाहिये, जिसे बल एवं बुद्धि के द्वारा जीता जा सके। वह स्पष्ट करती है " आप में ओर रघुनाथजी में निश्चित ही वैसा ही अन्तर है जैसा जुगनू एवं सूर्य में।" :-

तुम्हहि रघुपतिहि अन्तर कैसा।
खलु खद्योत दिनकरहि जैसा॥ 44

(घ) राम के परब्रम्ह-स्वरूप में आस्था :

वह राम को विष्णु भगवान् का अवतार मानती है। वह कहती है कि रघुकुल शिरोमणि राम विश्व-रूप है अतः उनका विरोध मत कीजिये। उन्हें मनुष्य जान कर हठ मत कीजिये। वे विष्णु के अवतार हैं तथा काल, कर्म ओर जीव सभी उन्हीं के हाथ में हैं :

तासु बिरोध न कीजिअ नाथा।
काल करम जिव जाकें हाथा॥ 45

कंत राम बिरोध परिहरहू।
जानि मनुज जनि हठ मन धरहू॥ 46

(ड़) रावण को वानप्रस्थ का सुझाव :

वह रावण को राज्य-कार्य से विमुक्त होकर, अपना राज्य मेघनाद को देकर वन में जा कर आत्मोद्धार के लिये रघुनाथजी का भजन करने का सुझाव देती है। वह एक विदुषी की तरह समझाती है, "आपको जीवन में जो कुछ करना था, वह सब कुछ कर चुके। अब तो बुढ़ापा आ गया है। वृद्धावस्था की शोभा संन्यास से ही है। सन्तजन ऐसी नीति कहते हैं कि वृद्धावस्था में राजा को वन में चले जाना चाहिये एवं सृष्टि के रचयिता, पालन-कर्ता एवं संहार-कर्ता भगवान् का भजन करना चाहिये।"

(च) शकुन-अपशकुन में विश्वास :

मन्दोदरी को शकुन-अपशकुन में विश्वास है। राम द्वारा रावण के छत्र, मुकुट एवं मन्दोदरी के कर्णफूल गिराये जाने से सभा में रस-भंग हो जाता है और सम्पूर्ण सभा भयाक्रान्त हो उठती है। इसे भयंकर अपशकुन मान कर अनिष्ट की आशंका से मन्दोदरी उद्वेलित हो उठती है। अतः वह सजल नेत्रों से दोनों हाथ जोड़कर राम का विरोध छोड़ देने की रावण से प्रार्थना करती है।

(छ) कर्म-फल में विश्वास :

मन्दोदरी को विश्वास है कि समय आने पर कर्ता को उसके पाप-कर्म का फल अवश्य भोगना पड़ता है :

अवश्यमेव लभते फलं पापस्य कर्मण:।
भर्त: पर्यागते काले कर्ता नास्त्यत्र संशय:॥ [47]

शुभ कर्म करने वाले को उत्तम फल की प्राप्ति होती है और पापी को उसके पाप का फल अर्थात दु:ख भोगना पड़ता है। इसलिये वह रावण की दुर्दशा का कारण राम के विरोध को ही मानती है। रावण की मृत्यु पर विलाप करती हुई वह कहती है, ''राम के विमुख होने से ही आपकी ऐसी दुर्दशा हुई कि आज कुल में कोई रोने वाला भी नहीं रहा। आज आपके सिर और भुजाओं को गीदड़ खा रहे हैं। राम-विमुख के लिये ऐसा होना अनुचित भी नहीं हैं : ''

राम बिमुख अस हाल तुम्हारा।
रहा न कोउ कुल रोवनिहारा॥
अब तव सिर भुज जंबुक खाहीं।
राम बिमुख यह अनुचित नाहीं॥ [48]

6. शूर्पणखा :

शूर्पणखा रावण की बहन है। वह दुष्ट ह्रदय है और नागिन के समान भयानक है। उसकी आकृति बड़ी भयंकर है और वह ऋषि-मुनियों की तपस्या में विघ्न डाला करती है :

सिद्धविघ्नकरी चापि रौद्री शूर्पणखा तथा। [49]

(क) शूर्पणखा की कामातुरता :

एक बार पंचवटी में राम-लक्ष्मण को देख कर वह उनके अपूर्व सौन्दर्य की ओर आकृष्ट हो जाती है। वह काम-भाव से पीड़ित हो कर राक्षसी माया से मनोहर रूप धारण करके उनसे प्रणय-याचना करती है। वह अपने छद्मवेशी भव्य रूप से उन्हें डिगाने का प्रयत्न करती है। लेकिन राम-लक्ष्मण की चारित्रिक-दृढ़ता के कारण, अपने प्रयास में असफल हो कर वह अपना वास्तविक, घृणित, भयकारी स्वरूप प्रकट करती है। तब लक्ष्मण उसके नाक-कान काट लेते हैं। इस प्रकार किसी अपरिचित के सौन्दर्य पर आसक्त हो कर प्रणय-याचना करना उसकी कामातुरता का ही प्रतीक है।

(ख) राक्षसी माया का पूर्ण ज्ञान :

शूर्पणखा मायावी शक्तियों से सम्पन्न है। वह माया का निर्माण करके कभी सुन्दरी का रूप धारण कर लेती है, तो कभी भयानक स्वरूप प्रकट करती है। प्रारम्भ में राम-लक्ष्मण के पास प्रणय-निवेदन के लिये जाते समय वह अपना स्वरूप सुन्दर बना कर जाती है, लेकिन प्रणय-प्रयास में असफल होने पर अपना यथार्थ भयंकर रूप प्रकट करती है। वह राम से कहती है, "मेरा नाम शूर्पणखा है और मैं इच्छानुसार रूप धारण करने वाली राक्षसी हूँ" :

श्रूयतां राम तत्त्वार्थं वक्ष्यामि वचनं मम।
अहं शूर्पणखा नाम राक्षसी कामरूपिणी॥ 50

(ग) स्वार्थ-सिद्धि के लिये असत्य का आश्रय :

वह अपनी कार्य-सिद्धि के लिये निस्संकोच असत्य का आश्रय लेती है। वह प्रणय याचना करते हुये राम से कहती है,"त्रैलोक्य में योग्य पुरुष न मिलने के कारण मैं अभी तक अविवाहित रही हूँ। अब तुम्हें देख कर मेरा मन तुम्हारी ओर आकर्षित हो गया है।"

खर-दूषण एवं त्रिशिरा के मारे जाने पर वह रावण को राम के विरूद्ध भड़काने के लिये असत्य बोलती है। वह कहती है कि जब लक्ष्मण को यह मालुम हुआ कि वह रावण की बहन है तो वे उसकी हँसी उड़ाने लगे और अन्त में राम के छोटे भाई ने उसके नाक-कान काट डाले।

(घ) शूर्पणखा का नीति-ज्ञान :

शूर्पणखा को नीति का अच्छा ज्ञान है। वह खर-दूषण एवं त्रिशिरा के विनाश के बाद रावण के पास जाकर उसे राम के विरूद्ध भड़काती हुई कहती है, " हे रावण! तूने देश और खजाने की सुधि भुला दी है। तू मद्यपान करता है और दिन-रात पड़ा सोता रहता है। तू अपने शत्रुओं से असावधान हो गया है। नीति के बिना राज्य और धर्म के बिना धन प्राप्त करने से, भगवान को समर्पण किये बिना उत्तम कर्म करने से एवं विवेक उत्पन्न किये विना विद्या पढने से परिणाम में श्रम ही हाथ लगता है। बुरी संगति से यति, बुरी सलाह से राजा, अभिमान से ज्ञान, मद्यपान से लज्जा, नम्रता-रहित प्रीति एवं अहंकार से गुणवान शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं। शत्रु, रोग, अग्नि, पाप, स्वामी और सर्प को छोटा नहीं समझना चाहिये":

राजनीति बिनु धन बिनु धर्मा।
हरिहि समर्पे बिनु सतकर्मा॥
विद्या बिनु बिबेक उपजाएँ।
श्रम फल पढें किएँ अरू पाएँ॥
संग तें जती कुमंत्र ते राजा।
मान ते ग्यान पान तें लाजा॥
प्रीति प्रनय बिनु मद ते गुनी॥
नासहिं बेगि नीति अस सुनी॥
रिपु रुज पावक पाप, प्रभु अहि गनिअ न छोट करि।
अस कहि बिबिध बिलाप, करि लागी रोदन करन॥ 51

रावण को सम्बोधित करके कहे गये उसके विचार उसकी विज्ञता के परिचायक हैं।

7. मारीच :

मारीच अपने प्रारम्भिक जीवन में यज्ञ विध्वंस के कार्यों में भाग लेता है लेकिन राम की शक्ति से परिचित होने पर उसके विचारों में परिवर्तन हो जाता है।

(क) राम के ईश्वरत्व में विश्वास :

वह रावण को समझाता है कि राम मनुष्य-रूप में चराचर के स्वामी हैं। सब का जीवन-मरण उन्हीं के आधीन है :

तेहिं पुनि कहा सुनहु दससीसा।
ते नररूप चराचर ईसा।
तासों तात बयरू नहिं कीजै।
मारें मरिअ जिआएँ जीजै॥ 52

(ख) नीति का ज्ञान :

उसे नीति का अच्छा ज्ञान है। वह जानता है कि शस्त्रधारी, भेद जाननेवाले, समर्थ स्वामी, मूर्ख, धनवान, वैद्य, भाट, कवि और रसोइया, इन नौ व्यक्तियों से विरोध करने में कल्याण नहीं है:-

तब मारीच हृदय अनुमाना।
नवहिं बिरोधें नहिं कल्याना॥
सस्त्री मर्मी प्रभु सठ धनी।
बैद बंदि कबि भानस गुनी॥ 53

(ग) समरांगण में वीरगति से मोक्षपद-प्राप्ति :

वह रावण के हाथों प्राण-दण्ड पाकर मरने की अपेक्षा आत्मोद्धार के लिये समरांगण में मरना श्रेयस्कर समझता है, क्योंकि रणभूमि में प्राण त्यागने वाला वीरगति (सद्गति) को प्राप्त करता है।

8. लंकिनी :

लंका की द्वार-रक्षक लंकिनी राम-विरोधी राक्षसी है। वह अत्यन्त ही चालाक है एवं सूक्ष्म से सूक्ष्म जीव को देखने की दृष्टि उसे प्राप्त है। वह हनुमान के मुष्टि-प्रहार से धराशायी हो जाती है। अन्तिम समय में, सज्जनों की सत्संगति को जीवन की पवित्रता के लिये सर्वश्रेष्ठ मान कर वह परमधाम को प्राप्त हो जाती है।

9. अन्य राक्षस-गण :

गोस्वामीजी ने खर-दूषण, त्रिशिरा, ताड़का, सुबाहु, विराध, कबन्ध, अक्षयकुमार, कालनेमि, अकम्पन, अतिकाय, वज्रदन्त, दुर्मुख, धूमकेतु, शुक, महोदर, देवान्तक, नरान्तक आदि राक्षसों का भी चित्रण किया है जो जन्म,कर्म एवं स्वभाव से ऋषि-मुनियों के शत्रु और देव-धर्म विरोधी हैं। केवल रावण का पुत्र प्रहस्त एवं उसका नाना माल्यवान ही ऐसे हैं, जो रावण को सत्परामर्श द्वारा सन्मार्ग पर लाने का प्रयास करते हैं। इनके अतिरिक्त त्रिजटा नामक राक्षसी भी राम-भक्त, ज्ञान में निपुण एवं दूरदर्शी है। वह सीता को संकट, दु:ख एवं घोर निराशा के क्षणों में अपनी सूझ-बूझ से धैर्य एवं सान्त्वना देती है।

[2] वानर-भालू :

'रामचरितमानस' में जिस वानर-जाति का वर्णन किया गया है, वह जंगल में रहने वाली, एक वृक्ष से दूसरे वृक्ष पर कूदने वाली तथा वस्त्र-हीन फिरने वाली सामान्य बन्दर जाति नहीं है। इनके पास रहने के लिये निवास-स्थान, आचार-व्यवहार एवं नैतिक मूल्य हैं। ये महान् बलशाली हे एवं उन्होंने बड़े-बड़े राज्य स्थापित किये हैं। किष्किन्धा वानरों का ही राज्य है, जिसका राजा बालि है।

(क) देवताओं द्वारा वानर-रूप धारण :

देवताओं ने ही वानर-रूप धारण किया है। ब्रम्हाजी देवताओं को पृथ्वी पर जाकर वानर-शरीर धारण कर भगवान् के चरणों की सेवा करने की आज्ञा देते हैं :

निज लोकहि बिरंचि गे देवन्ह इहइ सिखाइ।
बानर तनु धरि धरि महि हरि पद सेवहु जाइ॥ 54

तदनुसार देवता पृथ्वी पर जाकर वानर देह धारण कर लेते हैं

बनचर देह धरी छिति माहिं।
अतुलित बल प्रताप तिन्ह पाहीं॥ 55

(ख) महान् बलशाली एवं वीर :

वानर एवं भालू अत्यन्त वीर हैं। वे दर्प और बल में सिंह के समान हैं। वे पर्वतों को हिलाने एवं स्थिर-भाव से खड़े वृक्षों को उखाड़ने की शक्ति रखते हैं। उनके पैरें में पृथ्वी को विदीर्ण कर डालने की शक्ति है। वे अपने वेग से महासागरों को भी लाँघ सकते हैं। वे आकाश में प्रवेश कर सकते हैं एवं मतवाले हाथियों से भिड़ सकते हैं। उनके शरीर एवं रूप भयंकर हैं। उनके बल की कोई सीमा नहीं हैं। वे वीर पराक्रमी और इच्छानुसार रूप धारण करनेवाले हैं। वे गजराजों एवं पर्वतों के समान महाकाय एवं महाबली हैं:-

अप्रमेयबला वीरा विक्रान्ताः कामरूपिणः।
ते गजाचलसंकाशा वपुष्मन्तो महाबलः॥ 56

(ग) वानरों के शस्त्र :

वानरों एवं भालूओं के पर्वत, वृक्ष और नख ही शस्त्र हैं। वे पत्थर की चट्टानों से प्रहार करते हैं और पर्वतों से लड़ते हैं :-

शिलाप्रहरणाः सर्वे सर्वे पर्वतयोधिनः। 57

वे दाँतों से काटते हैं, लातों से रौंदते हैं और नाखूनों से छाती एवं पेट फाड़ डालते हैं। इनको सब प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों का ज्ञान है।

प्रायः सभी वानर एवं भालू गदा-युद्ध में प्रवीण हैं। कई वानर मल्ल-विद्या में निष्णात हैं। वे राक्षसों को युद्ध में घुमा कर पछाड़ते हैं, पैर पकड़ कर पृथ्वी पर पटकते हैं, भुजायें उखाड़ लेते हैं एवं घूसों से मारते हैं। उनका बल असीम है और उनके शरीर सुमेरु एवं मन्दाचल पर्वत के समान विशाल हैं।

(घ) राम के प्रिय सखा :

वानर-भालुओं को राम आदर देते हैं, प्रेम से मिलते हैं एवं उनकी कुशल-क्षेम पूछते हैं। वे गुरू वशिष्ठ से कहते हैं, "ये सब मेरे सखा हैं। ये संग्राम रूपी समुद्र

में मेरे लिये जलयान के समान हुये हैं। मेरे हित के लिये इन्होंने अपने प्राणों तक को होम दिया है। ये मुझे भरत से भी अधिक प्रिय हैं।

ए सब सखा सुनहु मुनि मेरे।
भए समर सागर कहँ बेरे॥
मम हित लागि जन्म इन्ह हारे।
भरतहु ते मोहि अधिक पिआरे॥ 58

राम के राज्याभिषेक के बाद अयोध्या से विदा करते समय राम इनकी सेवा की सराहना करते हुये कृतज्ञता-ज्ञापन करते हैं :

तुम अति कीन्हि मोरि सेवकाई।
मुख पर केहि बिधि करों बड़ाई॥
ताते मोहि तुम्ह अति प्रिय लागे।
मम हित लागि भवन सुख त्यागे॥ 59

(ड़) सेवा के प्रतीक :

वानर सेवा के प्रतीक हैं। वे राम की सेवा करके रावण के विनाश में सहयोगी होते हैं। राम, सम्पूर्ण सृष्टि को त्रस्त कर देने वाले महाबली रावण के वध का श्रेय भालू एवं वानरों को देते हैं :

तुम्हरें बल मैं रावनु मारयों।
तिलक बिभीषन कहँ पुनि सारयो॥ 60

बालि, सुग्रीव, हनुमान, अंगद एवं नल-नील जैसे पराक्रमी योद्धाओं को जन्म देने का श्रेय वानर-जाति को ही है। ऋक्षराज जामवन्त ऋक्ष-कुल के भूषण हैं।

1. हनुमान :

भगवान् राम के अनन्य भक्त हनुमान युग-युगान्तर से भारत ही नहीं, समूचे दक्षिण-पूर्वी एशिया के जन-मानस में बसे हुये हैं। राम के साथ ही ये भी सम्मानित एवं पूजित हैं। इनके प्रति निष्ठा एवं आदर का भाव एक संस्कार के रूप में जन-मानस में समाहित हो गया है। ये 'शंकर सुवन केशरी नन्दन' हैं। सामान्यतः यह माना जाता है कि ये पवन-पुत्र हैं :

मारुतस्योरसः श्रीमान् हनुमान् नाम वानरः।
वज्रसंहननोपेतो वैनतेयसमो जवे॥ 61

इनकी माता का नाम अंजना है। इसी से उन्हें आंजनेय और मारुति कहा जाता है। महाराष्ट्र में तो इनका मारुति नाम ही अधिक प्रचलित है। शैवागमों में इन्हें ग्यारहवें रूद्र का अवतार माना गया है। ये विविध गुणों के आगार है।

(क) तेजस्वी सुन्दर स्वरूप :

इनका रंग स्वर्ण के समान है एवं शरीर पर तेज है। ये अपने सुन्दर स्वरूप के कारण 'सुन्दर' नाम से अभिहित किये गये हैं। प्रसिद्ध जैन कवि स्वयंभू की अपभ्रंश भाषा में रचित रामायण 'पउम चरिउ' के अनुसार इनका वास्तविक नाम 'सुन्दर' है; परन्तु इन्द्र के आघात से इनकी हनु (ठोढ़ी) आगे निकल आई। इसलिये इन्हें हनुमान कहा जाने लगा। इसी 'सुन्दर' नाम के आधार पर 'रामचरितमानस' के एक काण्ड का नाम 'सुन्दरकाण्ड' रखा गया है।

(ख) अलौकिक शक्ति-सम्पन्न वीर :

ये विशालकाय एवं अतुल शक्ति के धाम हैं। उनका शरीर वज्र के समान कठोर है। बाल्यावस्था में ही उन्होंने सूर्य को मोदक समझ कर निगल लिया था। जामवन्त इनकी शक्ति को पवन के समान मानते हैं। सीता-सुधि के लिये जाते समय वे जिस पर्वत पर उछल कर पैर रखते हैं, वह तुरन्त ही पाताल में धँस जाता है। उन्होंने समुद्र के मध्य रहनेवाली छाया को पकड़ कर मारने वाली राक्षसी का वध किया है एवं मुष्टिका प्रहार से लंकिनी को धराशायी किया है। ये सामान्य युद्ध करके ही ससैन्य अक्षयकुमार को मार डालते हैं और मेघनाद के रथ को भी चकनाचूर कर देते हैं। वे अपने बल एवं बुद्धि से संजीवनी बूटी लाकर लक्ष्मण के प्राण बचाते हैं।

(ग) तर्कातीत गति :

हनुमान महान् गतिमान हैं। समुद्र-संतरण करके सीता की सुधि लाना एवं लंका दहन करना उनकी तर्कातीत गति के प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। द्रोणगिरि पर्वत से संजीवनी बूटी लाकर लक्ष्मण के प्राण बचाना हनुमान जैसे वेगवान् वीर के लिये ही संभव है। इसीलिये विभीषण रावण से कहते हैं कि हनुमान की गति को इस संसार में कौन जान सकता है?

समुद्रं लंघयित्वा तु घोरं नदनदीपतिम्।
गतिं हनूमतो लोके को विद्यात् तर्कयेत वा॥ 62

(घ) प्रचण्ड मुष्टि-योद्धा :

हनुमान मुष्टि-योद्धा हैं। वे सदैव मुष्टि-प्रहार करते हैं। वे अपने मुष्टि-प्रहार से महाबली रावण को भी मूर्च्छित कर देते हैं। रावण मूर्च्छा के भंग होने पर हनुमान के असाधारण बल की सराहना करता है :-

मुठिका एक ताहि कपिमारा।
परेउ सैल जनु बज्र प्रहारा॥
मुरूछा गै बहोरि सो जागा।
कपि बल बिपुल सराहन लागा॥ 63

(ङ) निर्भीकता :

अकेले ही लंका में जाकर अशोक-वाटिका उजाड़ना, ससैन्य अक्षयकुमार को मारना एवं मेघनाद से भिड़ जाना उनकी निर्भीकता का प्रमाण है। रावण की राज-सभा में भी वे निर्भयता से अपना परिचय देते हैं, राम-लक्ष्मण का महत्त्व प्रतिपादित करते हैं एवं रावण की कमजोरियों को प्रकट करते हैं। वे साम, दाम, दण्ड और भेद आदि नीतियों से रावण को समझाते हैं एवं सीता को राम के अधीन करके भगवान् की भक्ति करने का सुझाव देते हैं।

(च) असाधारण आत्म-विश्वास :

उन्हें आत्म-विश्वास है कि वे समुद्र को लाँघ कर, रावण को मार कर एवं त्रिकूट पर्वत को उखाड़ कर यहाँ ला सकते हैं। लेकिन जामवन्त उन्हें केवल सीता की सुधि लेकर लौट आने का आदेश देते हैं इसलिये वे वैसा ही करते हैं।

(छ) विवेक-प्रयोग का आधिक्य एवं प्रत्युत्पन्नमति :

हनुमान ने सूर्य से विद्या प्राप्त करके ज्ञानार्जन किया है एवं राम के सानिध्य से असाधारण योग्यता प्राप्त की है। सुरसा के प्रसंग में वे अपनी प्रत्युत्पन्नमति का परिचय देकर उसका आशीर्वाद प्राप्त कर लेते हैं। सीता-अन्वेषण के क्रम में एक गुफा में वृद्धा तपस्विनी से भेंट होने पर वे उसका परिचय पूछ कर अपना वृत्तान्त सुनाते हैं। वे राम-लक्ष्मण का परिचय प्राप्त करने के लिये ब्राह्मण का रूप धारण करते हैं। सीता का पता लगाने के लिये जब वे लंका में जाते हैं, तब विभीषण का परिचय प्राप्त करने के लिये भी विप्र-रूप धारण करते हैं। विभीषण का परिचय प्राप्त करने के बाद ही वे अपना वास्तविक परिचय देकर लंका में आगमन का उद्देश्य बताते हैं। लंका में अशोक वाटिका के नीचे बैठी हुई सीता के सामने परिचयात्मक अँगूठी डाल कर अतिशय नम्रतापूर्वक राम का सन्देश सुनाते हैं। सम्पूर्ण लंकानगरी

को वे जला देते हैं; लेकिन विभीषण के घर को सुरक्षित रख देते हैं। इस प्रकार उनका प्रत्येक कार्य विवेकपूर्ण एवं प्रत्युत्पन्नमति से सम्पन्न है।

(ज) हनुमान की नम्रता :

चूड़ामणि लेकर लौटे हनुमान से राम सीता का सन्देश सुनते हैं और उनके शौर्य एवं भक्तिभाव की प्रशंसा करते हुये गद्‌गद् हो उठते हैं। हनुमान की राम के प्रति निष्ठा उनकी उज्ज्वल भक्ति का प्रमाण है। हनुमान नम्रता से कहते हैं; ''बन्दर का यही पुरुषार्थ है कि वह एक डाल से दूसरी डाल पर चला जाता है। मैंने समुद्र लाँघकर स्वर्णनगरी लंका जलाई और राक्षस गणों को मार कर अशोक-वाटिका को उजाड़ा, इसमें मेरा कुछ भी सामर्थ्य नहीं है। यह तो सब आपका ही प्रताप हैं :

साखामृग कै बड़ि मनुसाई।
साखा तें साखा पर जाई॥
नाघि सिन्धु हाटकपुर जारा।
निसिचर जन बधि बिपिन उजारा॥
सो सब तव प्रताप रघुराई।
नाथ न कछू मोरि प्रभुताई॥ [64]

(झ) सच्चरित्र बाल ब्रह्मचारी :

वे जब सीता की खोज में संलग्न थे तब रात्रि के अन्तिम प्रहर में रावण के अन्तः पुर में अचेत एवं अर्धनग्नावस्थित ललनाओं को देखते हैं, किन्तु उन्हें कहीं भी सीता के दर्शन नहीं होते। उस विशाल, भव्य, श्रृंगारमय राजमहल में भ्रमण करते हुये हनुमान को सहस्त्रशः स्वर्गीय सुन्दरियाँ दिखाई दी पर उनका मन विचलित नहीं होता क्योंकि वे बाल ब्रह्मचारी हैं और उनका मन विकार-रहित है।

(ञ) सजग मंत्री :

हनुमान सुग्रीव के सजग मंत्री हैं। किष्किन्धा का राज्य पाकर सुग्रीव ऐश्वर्य एवं सुखोपभोग में मग्न हो जाता है। यह देख कर हनुमान चिन्तित हो उठते हैं कि सुग्रीव ने राम के कार्य को भुला दिया है। अतः वे नम्रता से सुग्रीव को साम, दाम, दण्ड, भेद की नीति से समझाते हैं एवं राम के कार्य की ओर प्रवृत्त करते हैं।

(ट) हनुमन्नाटक के रचनाकार :

एक मान्यता के अनुसार रामायण परम्परा का प्रख्यात नाटक 'हनुमन्नाटक' हनुमान की रचना है। यह मान्यता भी है कि यह ग्रन्थ 'वाल्मीकि रामायण' से भी प्राचीनतर

है और हनुमान ही राम-कथा के आदि रचनाकार है। कहा जाता है कि वाल्मीकि को भय हुआ था कि इस ग्रन्थ के रहते उनकी 'रामायण' को पर्याप्त आदर नहीं मिल सकेगा। अतः वाल्मीकि को इस संकट से उबारने के लिये हनुमान ने अपना नाटक सागर में डुबो दिया एवं युगों बाद राजा भोज ने उसका पुनरुद्धार किया। स्पष्टतः यह मात्र एक कथा है, जिसका उद्देश्य हनुमान के व्यक्तित्व के दो पक्षों को प्रस्थापित करना है- हनुमान की विद्वत्ता एवं राम-भक्ति।

(ठ) अजरता एवं अमरता का आशीर्वाद प्राप्त :

वे अशोक-वाटिका में सीता को राम का सन्देश देते हैं और उनके प्रति राम के पवित्र प्रेम का वर्णन करते हैं। वे उन्हें हृदय में राम की प्रभुता का स्मरण करके धैर्य धारण करने का निवेदन करते हैं। वे रावण सहित राक्षसों को मारने की राम की शक्ति का विश्वास दिला कर अपनी शक्ति का भी उल्लेख करते हैं। फिर वे सीता से अजरता, अमरता एवं राम की कृपा प्राप्त करने का आशीर्वाद प्राप्त करते हैं :

अजर अमर गुननिधि सुत होहू।
करहुँ बहुत रघुनायक छोहू॥
करहुँ कृपा प्रभु अस सुनि काना।
निर्भर प्रेम मगन हनुमाना॥ 65

(ड) राम के अनन्य सेवक :

वे राम के अनन्य सेवक हैं। वे अपने आपको राम का दूत मानने में गौरव एवं पूर्णानन्द का अनुभव करते हैं :

राम दूत मैं मातु जानकी।
सत्य सपथ करुणानिधान की॥ 66

उन्होंने राम की सच्ची सेवा की है, जिसके कारण राम उनके ऋणी हो गये हैं :

साँची सेवकाई हनुमान की सुजानराय,
ऋतिन्याँ कहाये हौं बिकाने ताके हाथ जू॥ 67

इसीलिये सुग्रीव कहते हैं, ''पवन कुमार! तुम पुण्य की राशि हो, जो भगवान् ने तुम्हें अपनी सेवा में रख लिया है'' :

पुन्य पुंज तुम्ह पवनकुमारा।
सेवहु जाइ कृपा आगारा॥

(ढ़) आदर्श राम-भक्त :

हनुमान राम के आदर्श भक्त हैं। वैष्णव संहिताओं एवं विविध रामायणों के अनुसार राम ही हनुमान के स्नेह, निष्ठा और विचार की सीमा रेखा है। राम-भक्ति के कारण उनके चरित्र में अलौकिक शक्ति का संचार हो गया है। अपनी दास्य-भाव की भक्ति के कारण राम उनके इतने अपने हैं कि राम-भक्ति एवं कृपा प्राप्ति हेतु हनुमान की उपासना अनिवार्य मानी गई है।

(ण) राम के द्वारा कृतज्ञता-ज्ञापन :

सीता-अन्वेषण के पश्चात् जब हनुमान लंका से लौटते हैं, तब जामवन्त राम के समक्ष उनकी प्रशंसा करते हैं। स्वयं राम हनुमान की प्रशस्ति करते हुये कहते हैं, "हे हनुमान! तेरे समान मेरा उपकार करने वाला देवता, मनुष्य अथवा मुनियों में कोई भी नहीं है। मैं तेरा क्या प्रत्युपकार करूँ? मैं तुम से उऋण नहीं हो सकता :

सुनु कपि तोहि समान उपकारी।
नहिं कोउ सुर नर मुनि तनुधारी।।
प्रति उपकार करौं का तोरा।
सनमुख होइ न सकत मन मोरा।। [68]

(त) हनुमान की शरणागत वत्सलता :

अपनी माता अंजनी की कुटिया में शरणागत राजा शकुंत की रक्षा के लिये अपने आराध्य देव राम से युद्ध करना हनुमान की शरणागत-वत्सलता का द्योतक है। अन्त में उन्होंने शकुन्त को विश्वामित्र से क्षमादान दिलवा कर सब के सम्मान की रक्षा भी की है।

2. अंगद :

अंगद वानरराज बालि के पुत्र हैं। उनकी माता का नाम तारा है। वे किष्किन्धा के युवराज हैं। वे धीर, वीर एवं चतुर हैं। वे बल की राशि हैं। उनका जीवन विविध गुणों से ओत प्रोत है :

(क) असाधारण पराक्रमी वीर :

अंगद परम पराक्रमी वीर हैं। वे गदायुद्ध में निष्णात हैं। वे एक मल्ल योद्धा हैं, जो सदैव पाद-प्रहार करके शत्रु को परास्त करते हैं। जिस समय वे दूत के रूप में रावण की राजसभा में जाते हैं, उस समय उनकी मुठभेड़ रावण के पुत्र से हो

जाती है। वे उसका पेर पकड़कर,उसे घुमा कर, भूमि पर पछाड़कर मार डालते हैं।

वे मेघनाद एवं कुंभकर्ण जैसे प्रचण्ड वीरों से घोर युद्ध करते हैं। वे रणोन्मत्त रावण से भी निस्संकोच भिड़ जाते हैं। वे मेघनाद एवं रावण के अपवित्र यज्ञों का विध्वंस करने में बढ़-बढ़ कर भाग लेते हैं। वे राम की सेना के प्रमुख सेना-नायकों में से एक हैं। वे वीरता की प्रतिमूर्ति हैं।

(ख) अंगद की निर्भीकता :

वे रावण की राज-सभा में सिंह की शान से प्रवेश करते हैं। उन्हें रावण के बल का कोई भय नहीं है। वे निर्भयता पूर्वक रावण की, उसकी राज-सभा में भर्त्सना करते हैं। जब रावण अपने राज-मुकुटों की दुर्दशा देखकर उत्तेजना-वश राक्षसों को राम-लक्ष्मण को जीवित पकड़-कर लाने का आदेश देता है, तब अंगद अत्यन्त क्रोधित हो उठते हैं। वे रावण से कहते हैं कि इस तरह गाल बजाते हुये उसे लज्जा आनी चाहिये। वे उसे 'निर्लज्ज' तथा 'कुल-नाशक' जैसे शब्दों से सम्बोधित करते हुये आत्महत्या करके मर जाने को कहते हैं। बलाढ्य रावण का उसके मुँह पर, उसकी ही राज-सभा में इस प्रकार मान-मर्दन करना अंगद जैसे निर्भीक वीर के लिये ही संभव है।

(ग) अपनी शक्ति पर असाधारण आत्मविश्वास :

अंगद को अपनी शक्ति पर दृढ़ विश्वास है। वे अपने पेर को बल-पूर्वक पृथ्वी पर स्थापित करके आव्हान करते हैं कि रावण की उस सभा का कोई भी वीर उनके पेर को पृथ्वी से हटा दे, तो प्रभु राम, सीता को हार कर वहाँ से लौट जायेंगे। रावण की आज्ञा से मेघनाद सहित सभी वीर राक्षस उनके पेर को हटाने का प्रयत्न करते हैं; लेकिन कोई भी योद्धा सफल नहीं होता है। यह घटना उनके अपरिमित आत्मविश्वास एवं उच्च मनोबल की द्योतक है।

(घ) अंगद का वाक्-चातुर्य :

अंगद अत्यन्त चतुर हैं इसलिये रावण के दरबार में दूत के रूप में भेजे जाते हैं। रावण से उनका वार्त्तालाप चतुराई से पूर्ण है। वे रावण को उसकी न्यूनताओं से अवगत कराते हुये राम की प्रभुता का वर्णन करते हैं। वे व्यंग्यात्मक शैली का प्रयोग करते हुये रावण का उपहास भी करते हैं। रावण को गर्व है कि उसने अपने मस्तक काट-काट कर भगवान शंकर की आराधना की है। इस पर अंगद कहते हैं कि यह कोई वीरता का काम नहीं है। कई जादूगर मस्तक काटने एवं जोड़ने का कार्य करते हैं।

जब रावण उनके पैर को पृथ्वी से हटाने के लिये झुकता है, तब अंगद स्वयं अपना पैर हटा कर रावण से कहते हैं कि उनका पैर पकड़ने से उसका कल्याण नहीं होगा। इस प्रकार अपने वाक्-चातुर्य से अंगद रावण को सबके समक्ष निस्तेज कर देते हैं।

(ङ) नीति-शास्त्र का ज्ञान :

अंगद को नीति-शास्त्र का पूर्ण ज्ञान है। वे रावण से कहते हैं कि प्रीति और वैर बराबर वालों से ही करना चाहिये। सिंह यदि मेंढक को मारे तो यह उसकी क्षुद्रता है :

प्रीति बिरोध समान सन करिअ नीति अस आहि।
जौं मृगपति बध मेडुकन्हि भल कि कहइ कोउ ताही॥ 69

अंगद का भाव यह है कि रावण को मारना राम की लघुता है। इसी प्रकार रावण के चारों मुकुटों के बारे में भगवान राम की जिज्ञासा का समाधान करते हुये अंगद कहते हैं कि साम, दाम, दण्ड और भेद- ये चारों नीति-धर्म के चार सुन्दर चरण हैं, जो राजा के हृदय में निवास करते हैं; किन्तु रावण में धर्म का अभाव देख कर ये चारों राम के पास आ गये है :

साम दाम अरु दंड बिभेदा।
नृप उर बसहिं नाथ कह बेदा॥
नीति धर्म के चरन सुहाए।
अस जियँ जानि नाथ पहिं आए॥ 70

(च) रावण को सत्परामर्श :

वे अपने सत्परामर्श द्वारा रावण को सन्मार्ग पर लाने का प्रयत्न करते हैं। वे रावण से कहते हैं कि उनके पिता बालि से रावण की मित्रता है इसलिये वे उसकी भलाई के लिये आये हैं। वे रावण को स्मरण कराते हैं कि उसका उत्तम पुलस्त्य कुल है, उसने शिव एवं ब्रह्मा की घोर तपस्या करके वरदान प्राप्त किये हैं और उसने लोकपालों एवं राजाओं को जीता है। फिर वे कहते हैं कि उसने राजमद के वशीभूत होकर जगज्जननी सीता का हरण किया है। वे विविध उपायों से रावण को समझाते हैं और सीता को आदर पूर्वक लौटा कर राम की शरण स्वीकार करने का सत्परामर्श देते हैं। अंगद के ये सभी कथन उनके विवेक एवं बुद्धि के परिचायक हैं।

(छ) राम के अनन्य भक्त :

वे राम के परम भक्त हैं। वे जानते हैं कि बालि-वध के बाद राम ने ही उनकी रक्षा की है। वे राम की निन्दा सहन नहीं कर सकते हैं। रावण की राज-सभा में रावण के मुँह से राम की निन्दा सुन कर उनका क्रोध भड़क उठता है। वे दाँत किटकिटाते हुये अपने दोनों भुजदण्डों को पृथ्वी पर दे मारते हैं, जिससे पृथ्वी कंपायमान हो जाती है और सभा के सभी सभासद डगमगाते हुये नीचे गिर पड़ते हैं।

राम के राज्याभिषेक के-बाद जब राम अंगद को अयोध्या से विदा करते हैं, तब वे भाव-विभोर हो जाते हैं। वे भगवान से विलग होना नहीं चाहते। वे स्मरण दिलाते हैं कि मरते समय उनके पिता बालि ने उन्हें राम को सुपुर्द किया था। अतः राम ही उनके स्वामी, गुरु एवं माता-पिता सब कुछ हैं। तब प्रभु राम अपने हृदय की माला, वस्त्र एवं रत्नों के आभूषण उन्हें पहना कर और बहुत प्रकार से समझा कर उनको विदा करते हैं।

हनुमान के मुँह से अंगद के प्रेम का वर्णन सुन कर स्वयं भगवान् भी प्रेम-मग्न हो जाते हैं :

अस कहि चलेउ बालि सुत फिरि आयउ हनुमन्त।
तासु प्रीति प्रभु सन कही मगन भए भगवंत॥ [71]

3. सुग्रीव :

सुग्रीव वानराधिपति बालि के छोटे भाई हैं। बालि उन्हें धन, स्त्री एवं सर्वस्व से वंचित करके किष्किन्धा से निष्कासित कर देते हैं। वे अपने चार मंत्रियों सहित ऋष्यमूक पर्वत पर निवास करते हैं। इस पर्वत पर वे स्वयं को सुरक्षित समझते हैं क्योंकि मतंग ऋषि के शाप के कारण बालि के यहाँ आने की संभावना नहीं है। उनका जीवन कई चारित्रिक विशेषतायें लिये हुये हैं:

(क) भीरु स्वभाव :

सुग्रीव के प्रथम परिचय से मालुम होता है कि वे भीरु स्वभाव के हैं। राम-लक्ष्मण को ऋष्यमूक पर्वत की ओर बढ़ते देख कर वे भयभीत हो उठते हैं। उन्हें आशंका होती है, 'कहीं बालि ने मेरे वध के लिये तो इन्हें नहीं भेजा है?' अतः वे तुरन्त अपने मंत्री हनुमान को वस्तु-स्थिति का पता लगाने के लिये भेजते हैं। हनुमान ब्राह्मण-वेश में वहाँ जाकर यथार्थ परिचय प्राप्त करके, आश्वस्त हो कर, राम-लक्ष्मण को अपने कन्धों पर बैठा कर सुग्रीव के पास ले आते हैं।

(ख) सजगता एवं सतर्कता :

भयभीत मनुष्य या प्राणी का एक विशेष गुण है कि वह अधिक सावधान रहता है। सुग्रीव भी इसके अपवाद नहीं हैं। वे यह जानना चाहते हैं कि राम और महान् बलवान बालि की स्पर्धा हो सकती है या नहीं। इस हेतु से वे राम की शक्ति की परीक्षा करते हैं। वे राम को दुन्दुभि राक्षस का अस्थि-समूह एवं ताल के वृक्ष दिखलाते हैं जिन्हें राम सहज ही ढ़हा देते हैं। राम का अपरिमित बल देख कर उन्हें विश्वास हो जाता है कि वे बालि का वध अवश्य करेंगे।

(ग) रामाश्रय से शक्ति का संचार :

रणधीर बालि का युद्ध में सामना करना सुग्रीव के लिये संभव नहीं है। वे सदैव बालि से भयभीत रहते हैं, लेकिन राम के सहारे का बल पा कर वे गर्जना करते हुये बालि को युद्ध के लिये ललकारते हैं। भयंकर मल्ल-युद्ध होता है और सुग्रीव विकल हो कर भागते हैं। राम उन्हें आश्वस्त करके पुनः युद्ध के लिये प्रेरित करते हैं; लेकिन वे बालि के सामने शिथिल पड़ने लगते हैं, तब राम वृक्ष की ओट से बालि का वध कर देते हैं।

(घ) भोग-विलास में आकण्ठ आसक्त :

बालि-वध के बाद सुग्रीव को राज्य, कोष, नगर और स्त्री आदि सब कुछ प्राप्त हो जाता है। लेकिन स्वकार्य सिद्ध हो जाने पर राज्य-भोगादि में लिप्त होकर वे सीता-अन्वेषण का कार्य भूल जाते हैं। तब उनके बुद्धिमान मंत्री हनुमान साम, दाम, दण्ड और भेद की नीति बता कर सुग्रीव को समझाते हैं। हनुमान के वचन सुन कर वे भयभीत हो जाते हैं और सीता की खोज के लिये चारों ओर वानरों को भेजते हैं।

(ङ) विनम्रता :

उनका स्वभाव विनम्र है। उनकी प्रभु राम में दृढ़ आस्था है। वे रघुनाथजी से कहते हैं, "हे कृपानिधान! आपके गुणों का कैसे वर्णन करूँ! आप मुझ जैसे दुर्जन, गुण-रहित, कुल-हीन एवं अनाथ का पालन करने वाले हैं" :

कुजन पाल गुन बर्जित अकुल अनाथ।
कहहु कृपानिधि राउर कस गुन गाथ॥ [72]

(च) राम के द्वारा सम्मानित :

प्रभु राम अनेक रंगों के अनुपम और सुन्दर गहने-कपड़े मँगाते हैं। भरत अपने हाथों से वानरराज सुग्रीव को गहने-कपड़े पहनाते हैं। इस प्रकार वे राम के राज्याभिषेक में सम्मिलित हो कर तथा राम कृपा से विभूषित हो कर किष्किन्धापुरी को लौट जाते हैं।

4. बालि :

वानरराज बालि किष्किन्धा के अधिपति एवं सुग्रीव के जेष्ठ भ्राता हैं। वे महाबाहु, महान् बल से सम्पन्न तथा पराक्रमी हैं। उनके पास वानरों की अपार सेना है। वे महान् मल्ल योद्धा हैं। उनके घूँसे का प्रहार वज्र की तरह होता है। वे महा अभिमानी हैं। उन्होंने अपने बाहुबल से रीछों, लंगूरों तथा वानरों की रक्षा की है:

महाबलो महाबाहुर्वाली विपुल विक्रमः।
जुगोप भुजवीर्येण ऋक्षगोपुच्छवानरान॥ [73]

उनका जीवन कई विशेषताओं से संपन्न हैं:-

(क) महान् पराक्रमी वीर :

बालि महान् बलवान एवं अत्यन्त रणधीर है। वह शत्रु की ललकार को सहन नहीं कर सकता। एक बार मदान्ध रावण ने किष्किन्धा पुरी में आकर बालि को ललकारा था। बालि ने उसे दबोच कर काँख में लटका लिया और किष्किन्धापुरी के उपवन में छोड़ दिया। तब रावण बालि के इस अद्‌भुत पराक्रम की प्रशंसा करते हुये कहता है, "आप में अद्‌भुत बल है, पराक्रम एवं गम्भीरता है। आपने मुझे पशु की तरह पकड़ कर चारों समुद्रों पर घुमाया है। हे वानरराज! आपके अतिरिक्त दूसरा कौन ऐसा वीर है, जो मुझे इस प्रकार बिना थके-माँदे शीघ्रतापूर्वक ढ़ो सके" :

अहो बलमहो वीर्यमहो गाम्भीर्यमेव च।
येनाहं पशुवद् गृह्य भ्रामितश्चतुरोऽर्णवान्॥ [74]

इसी प्रकार मयकुमार मायावी अर्ध रात्रि के समय किष्किन्धापुरी के राज-द्वार पर आकर जब बालि को ललकारता है, तो वह उसी समय उससे युद्ध करने हेतु निकल पड़ता है। वह गुफा में भी मायावी का पीछा कर उसका वध कर देता है। रामाश्रय पाकर सुग्रीव भी जब बालि के पौरुष को ललकारता है, तो वह क्रोध में भर कर सुग्रीव से भिड़ जाता है और उसे घूँसे से मारता है। सुग्रीव अपने प्राण बचाने के लिये वहाँ से भाग जाता है।

(ख) मदान्ध बालि का दुराचार :

बालि अपने छोटे भाई सुग्रीव के सर्वस्व के साथ-साथ स्त्री भी छीन कर उसे किष्किन्धापुरी से मार भगाता है। उसके भय से भयभीत सुग्रीव समस्त लोकों में फिरता रहता है और अन्त में ऋष्यमूक पर्वत पर निवास करता है।

(ग) धर्म-युद्ध की नीति का ज्ञान :

वह धर्म-युद्ध की नीति का ज्ञाता है। वह जानता है कि नीति के अनुसार शत्रु पर पीठ के पीछे से या छिप कर प्रहार नहीं किया जाना चाहिये। इसलिये वह अपने वध को धर्म-विरोधी बताता है :

'अयुक्तं यदधर्मेणं त्वयाहं निहतोगणे'

तब राम कहते हैं, "हे हरीश्वर! श्रेष्ठ कुलोत्पन्न क्षत्रियोचित कर्तव्यानुसार तुम्हारे अपराध क्षम्य नहीं है। कन्या, बहन एवं अनुज वधू को काम-दृष्टि से देखने वाले के लिये मृत्यु-दण्ड ही उपयुक्त विधान है" :

न च ते मर्षये पापं क्षत्रियोऽहं कुलोद्गतः।
औरसीं भगिनीं वापि भार्यां वाप्यनुजस्य यः॥
प्रचरेत् नरः कामात् तस्य दण्डो वधः स्मृतः॥ [75]

(घ) राम के परब्रह्म-स्वरूप में आस्था :

वह राम को समदर्शी मानता है। उसे विश्वास है कि अगर वह राम के हाथों मारा भी गया, तो उसको परमपद प्राप्त होगा। जब उसे राम का बाण लगता है, तब वह व्याकुल हो कर भूमि पर गिर पड़ता है; लेकिन फिर उठ बैठ कर अपने चित्त को राम के चरणों में लगा देता है। वह प्रभु को पहचान कर अपना जन्म सफल मानता है। यद्यपि वह मुँह से कठोर वचन कहता है; लेकिन उसके हृदय में उनके प्रति प्रेम है। वह राम के चरणों में अविचल प्रेम करके अपना शरीर त्याग कर परमधाम को प्राप्त करता है :

राम चरन दृढ़ प्रीति करि बालि कीन्ह तनु त्याग।
सुमन माल जिमि कंठ ते गिरत न जानइ नाग॥ [76]

5. तारा :

तारा वानरराज बालि की धर्मपत्नी है। वह सदैव अपने पति को सत्परामर्श देती

रहती है। अपनी चारित्रिक विशेषताओं के कारण उसका नाम आदर्श पतिव्रताओं में आदर से लिया जाता है :

(क) बालि को सत्परामर्श :

सुग्रीव के साथ बालि को युद्ध के लिये तत्पर देख कर वह उसे समझाने का प्रयत्न करती है। लेकिन दंभी बालि उसके सत्परामर्श को नारी-जन्य भीरूता का लक्षण समझ कर नहीं मानता।

(ख) बुद्धिमान एवं दूरदर्शी :

वह न केवल बुद्धिमान है; बल्कि दूरदर्शी भी है। वह राम और लक्ष्मण की शक्ति से अवगत है। वह जानती है कि सुग्रीव के सहायक राम और लक्ष्मण तेजस्वी एवं बलशाली हैं और वे संग्राम में काल को भी जीत सकते हैं।

(ग) श्रेष्ठ पतिव्रता एवं राम-भक्त :

तारा का स्थान श्रेष्ठ पतिव्रता स्त्रियों में गिना जाता है। अपने पति की मृत्यु पर उसे अत्यन्त दुःख होता है और वह विलाप करने लगती है। तब राम उसे संसार की नश्वरता का ज्ञान कराते हैं, जिससे उसे आत्म-सन्तोष हो जाता है। वह भगवान् राम के चरणों में अपना मन लगा कर प्रभु से भक्ति का वरदान माँगती है :

उपजा ग्यान चरन तब लागी।
लीन्हेसि परम भगति बर मागी॥ [77]

6. जामवन्त :

ऋक्षराज जामवन्त अत्यन्त वीर है। युवावस्था में उनमें दूर तक छलाँग लगाने की शक्ति थी। समुद्र तट पर सीतान्वेषण के लिये समुद्र लाँघने की चर्चा के समय वे कहते हैं कि वे एक छलाँग में नब्बे योजन तक जा सकते हैं। अब वे वृद्ध हो गये हैं। अतः उनमें पहले जैसी शक्ति नहीं रही। वामनावतार के समय वे युवा थे। तब उनके शरीर में बड़ा बल था। राजा बलि के यज्ञ में भगवान् वामन जब तीन पग भूमि नापने के लिये अपने शरीर का विस्तार कर रहे थे, तब जामवन्त ने उस विराट् स्वरूप की थोड़े ही समय में सात बार परिक्रमा कर ली थी।

वे सीता की खोज के लिये अंगद, हनुमान, नल, नील आदि श्रेष्ठ वीरों के साथ दक्षिण दिशा में जाते हैं। उनका जीवन कई गुणों से ओत-प्रोत है :

(क) .प्रबल पराक्रमी वीर :

जामवन्त वीरता की प्रतिमूर्ति है। जब मेघनाद राम को नागपाश में बाँध लेते हैं, तब जामवन्त उसे रण-भूमि में ललकारते हैं। मेघनाद उन पर त्रिशूल फेंकता है, जिसे वे पकड़ कर उसकी छाती पर दे मारते हैं। मेघनाद चक्कर खा कर भूमि पर गिर पड़ता है। फिर वे उसका पैर पकड़ कर लंका में फेंक देते हैं।

इसी प्रकार रावण से युद्ध करते समय भी वे पराक्रम दिखाते हैं। रावण जब हनुमान आदि वीरों को मूर्च्छित कर देता है, तब रणधीर जामवन्त उसे ललकारते हैं। वे उसकी छाती पर प्रचण्ड पाद-प्रहार करते हैं, जिससे व्याकुल हो कर वह पृथ्वी पर गिर पड़ता है। वे एक बार पुनः उस पर पादाघात कर प्रभु राम के पास लौट आते हैं।

(ख) विपत्ति में धैर्यशीलता :

वे प्रतिकूल परिस्थिति में भी धैर्य धारण किये रहते हैं। सीतान्वेषण में सफलता न मिलने पर जब अंगद अत्यन्त अधीर हो उठते हैं, तब वे कई उपदेश की कथायें कह कर उनका सान्त्वन करते हैं। उन्हें जीवन का अनुभव है। वे विपत्ति में भी धैर्यशील बने रहते हैं।

(ग) कुशल मार्ग-दर्शक एवं प्रेरणा के स्रोत :

वे कुशल मार्गदर्शक हैं और व्यक्ति की क्षमता को परख कर उसका सही मार्गदर्शन करते हैं। समुद्र तट पर जब प्रत्येक योद्धा अपने बल का आकलन करके समुद्र लाँघने में अपनी असमर्थता प्रकट करता है, तब वे वीरवर हनुमान को उनके सुप्त बल का स्मरण दिला कर समुद्र-संतरण के लिये प्रेरित करते हैं। उनकी प्रेरणा के फलस्वरूप हनुमान सोत्साह सीता की खोज के लिये प्रयाण करते हैं।

(घ) राम के परब्रह्म-स्वरूप में आस्था :

जामवन्त राम के भक्त हैं। वे अनेक पौराणिक कथाओं के ज्ञाता हैं। वे राम को मनुष्य न मान कर उन्हें निर्गुण ब्रह्म, अजेय और अजन्मा मानते हैं। वे अपने को भाग्यशाली समझते हैं; क्योंकि उनका सगुण ब्रह्म राम के प्रति अनुराग है :

तात राम कहुँ नर जनि मानहु।
निर्गुन ब्रह्म अजित अज जानहु॥
हम सब सेवक अति बड़भागी।
संतत सगुन ब्रह्म अनुरागी॥ [78]

7. नल-नील एवं अन्य वानरवीर :

नल और नील दोनों भाई शिल्पकार हैं जो अपनी शिल्प कुशलता से रामेश्वरम् से लंका तक, समुद्र पर विशाल सेतु का निर्माण करते हैं। वानरों द्वारा लाये हुये ऊँचे-ऊँचे पर्वत एवं वृक्षों को वे गढ़ते हैं और सुन्दर सेतु का निर्माण करते हैं। ब्रह्मा के वरदान से उनके हाथों द्वारा फेंके गये पत्थर पानी पर तैरते हैं। साथ ही उन्हें राम-कृपा का अतिरिक्त बल भी प्राप्त है, इसलिये वे सुदृढ़ एवं सुन्दर सेतु के निर्माण में सफल होते हैं। नील पराक्रमी वीर हैं। वे राम-रावण कुछ में वीरता से भाग लेते हैं। राम के प्रताप में उनकी आस्था है।

इनके अतिरिक्त केसरी, शठ, निशठ, विकटास्य, गज, गवाक्ष, दधिमुख, गद, गवय, शरभ, ऋषभ, द्विविद, मयन्द, गन्धमादन आदि वानर वीर हैं, जिन्होंने राम की ओर से युद्ध में बढ़-चढ़कर भाग लिया है। ये सभी राम-भक्त हैं और इन्होंने राम-कार्य के लिये अपना सर्वस्व न्योछावर कर दिया है।

[3] पक्षी :

पक्षियों में जिज्ञासु, तत्त्वनिष्ठ, भक्त एवं भगवान के गुण, तत्त्व और रहस्य को जानने वाले महाज्ञानी हुये हैं। 'रामचरितमानस' में जिन्हें सर्वश्रेष्ठ भक्त एवं ज्ञानी कहा गया है, वे सब पक्षी-योनि में ही उत्पन्न हुये हैं। जिस प्रकार वानर-भालू आदि वीरों ने अपना सर्वस्व समर्पित करके भगवान् राम की सेवा की है, उसी प्रकार पक्षियों में भी राम-कार्य के लिये प्राणार्पण करनेवाले महापुरुष हुये हैं। उन्होंने अपने श्रेष्ठ कर्मों के द्वारा दुर्लभ गति प्राप्त की है। गृध्रराज जटायु जैसे वीर ने अपने आदर्श जीवन से यह सिद्ध कर दिया है कि पक्षियों में भी धर्मात्मा एवं पराक्रमी होते हैं :

1. गृध्रराज जटायु :

भारतीय साहित्य में चार गिद्ध प्रसिद्ध हैं- सुपर्ण, अरुण, सम्पाति एवं जटायु। जटायु के पिता का नाम अरुण एवं माता का नाम श्येनी है। ये सम्पातिं के अनुज हैं। वे विशालकाय हैं एवं उनके शरीर की कान्ति नीले मेघ के समान है। उनकी छाती का रंग श्वेत है। उनका शरीर पर्वत-शिखर के समान विशाल एवं ऊँचा है। उनकी चोंच बड़ी तीखी है। नख, पँख और चोंच, ये ही उनके शस्त्र है। वे अपने पूर्वजों से प्राप्त राज्य का विधिवत् पालन करते हैं।

(क) प्रबल पराक्रमी वीर :

गृध्रराज जटायु बड़े ही बलवान सामर्थ्यशाली एवं भयंकर पराक्रम प्रकट करने वाले हैं। जब वे रावण को सीता-हरण करके ले जाते हुये देखते हैं, तो वज्र की तरह उस पर झपटते हैं।वे अपनी अपूर्व शक्ति से रावण से घोर युद्ध करके उसे भूमि पर पछाड़ देते हैं। वे अपनी चोंच से मार-मार कर रावण को घायल एवं लहूलुहान कर देते हैं। अन्त में रावण के द्वारा उनके दोनों पँख, पैर एवं पार्श्व भाग काट डालने पर वे भूमि पर गिर पड़ते हैं।

(ख) धर्म एवं नीति के ज्ञाता :

जटायु धर्म एवं नीति के ज्ञाता हैं। सीता का आर्त्त-क्रन्दन सुन कर वे दौड़ कर रावण के पास जाते हैं एवं उसे ऐसे दुष्कर्म से विरत होने के लिये समझाते हैं। वे कहते हैं, ''तुम्हें ऐसा निन्दित कर्म नहीं करना चाहिये। अपने धर्म में स्थित कोई भी राजा ऐसा निन्दित कर्म नहीं कर सकता। परायी स्त्री के स्पर्श से नीच-गति प्राप्त होती है। जिस प्रकार पराये पुरूषों के स्पर्श से अपनी स्त्री की रक्षा की जाती है, उसी प्रकार दूसरों की स्त्रियों की भी रक्षा करनी चाहिये। राजा को अनुचित या अशास्त्रीय कर्म में प्रवृत्त नहीं होना चाहिये; क्योंकि अन्य व्यक्ति राजा का ही अनुसरण करते हैं।'' जटायु के ये शब्द उनके नीति-ज्ञान के परिचायक हैं।

(ग) परमार्थ के लिये प्राणोत्सर्ग :

वे परमार्थ के लिये अपने प्राणों का बलिदान कर देते हैं। वे राक्षसराज रावण की प्रचण्ड शक्ति से अवगत हैं। वे यह भी जानते हैं कि वे स्वयं वृद्ध हैं, रावण युवा है और उनके पास युद्ध का कोई साधन नहीं है; जब कि रावण के पास धनुष, कवच, बाण तथा रथ आदि सब कुछ हैं। फिर भी वे अपना कर्तव्य निश्चित कर लेते हैं, ''मुझे अपने प्राण दे कर भी महात्मा श्रीराम तथा राजा दशरथ का प्रिय कार्य अवश्य करना होगा।'' :

अवश्यं तु मयाकार्यं प्रियं तस्य महात्मनः।
जीवितेनापि रामस्य तथा दशरथस्य च॥ [79]

इस प्रकार वे परमार्थ के लिये प्राणोत्सर्ग कर देते हैं।

(घ) राम के परब्रह्मत्व में आस्था :

वे राम को ईश्वर का अवतार मानते हैं। वे राम के दर्शनों के लिये जीवित रह कर राम को बताते हैं कि रावण ने उन्हें घायल किया है और वह सीता का

हरण करके दक्षिण दिशा की ओर ले गया है। तदनन्तर वे राम का विविध प्रकार से स्तवन कर एवं अखण्ड भक्ति का वरदान माँग कर श्री हरि के परमधाम को चले जाते है :-

अबिरल भगति मागि बर, गीध गयउ हरिधाम।
तेहि की क्रिया जथोचित, निज कर कीन्ही राम॥ [80]

(ड़) राम के हाथों से अन्तिम संस्कार :

जटायु के मुँह से सीता-हरण का वृत्तान्त सुन कर तथा उन्हें मृत देख कर राम एवं लक्ष्मण शोक-विह्वल हो उठते हैं। राम उन्हें अपनी गोद में उठा लेते हैं और अपने नयन-कमल द्वारा स्नेह रूपी पवित्र जल से मानो अर्घ्यदान देते हैं :

राघौ गीध गोद करि लीन्हों।
नयन-सरोज सनेह सलिल सुचि,
मनहु अरघजल दीन्हों॥ [81]

फिर वे अपने हाथों से चिता बनाकर उनका दाह-संस्कार करते हैं एवं गोदावरी में स्नान करके उनका पिण्डदान करते हैं। इस प्रकार श्रीराम पुत्रवत् सम्पूर्ण क्रियायें सम्पन्न करके उन्हें सद्गति प्रदान करते हैं।

2. पक्षीराज गरुड़ :

गरुड़ विष्णु के वाहन हैं। उनके पिता का नाम ऋषि कश्यप है, जो इस सृष्टि के सभी प्राणियों के जनक माने गये हैं। इनकी माता विनता है, जो दक्ष प्रजापति की पुत्री है। गरुड़ महा तेजस्वी, महाबली एवं रूपवान हैं। वे शीघ्रगामी हैं और वायु की गति से आकाश में भ्रमण करते हैं। उनके पँख अत्यन्त विशाल एवं सुदृढ हैं। वे कद्रु-पुत्र नागों के शत्रु हैं। उनके नाम पर एक पुराण भी है जो 'गरुड़ पुराण' के नाम से प्रसिद्ध है।

(क) मोह-ग्रस्तता :

जब मेघनाद ने राम को नागपाश में बाँध लिया, तब नारद मुनि ने गरुड़ को उन्हें बन्धन मुक्त करने के लिये भेजा। वे बन्धन काट कर तो आ गये; लेकिन उनके मन में एक संशय अंकुरित हुआ कि ये कैसे परमेश्वर के अवतार हैं, जिन्हें एक तुच्छ राक्षस ने बाँध लिया है। उनके ह्रदय में भ्रम छा गया और वे संदेहजनित दुःख से दुःखी हो कर, मन में कुतर्क करते हुये मोहवश हो गये।

(ख) ज्ञान की खोज :

गरूड़ अपने सन्देह निवारण के लिये ज्ञानी गुरु की खोज में निकल पड़ते हैं। वे देवर्षि नारद के पास जा कर अपना सन्देह प्रकट करते हैं। नारद समझ जाते हैं कि उन्हें माया व्याप गई है अत: वे उन्हें ब्रह्मा के पास भेज देते हैं। ब्रह्मा भी भगवान् की माया को बलवती जान कर उन्हें महादेवजी के पास भेज देते हैं।

महादेवजी उन्हें समझाते हैं कि सत्संग के बिना हरि की कथा सुनने को नहीं मिलती। हरि की कथा के श्रवण के बिना मोह नहीं मिटता और मोह के गये बिना श्रीराम के चरणों में दृढ़ प्रेम नहीं होता :

बिनु सतसंग न हरि कथा तेहि बिनु मोह न भाग।
मोह गएँ बिनु राम पद होइ न दृढ़ अनुराग।। [82]

इस प्रकार महादेवजी उन्हें सत्संग के लिये महाज्ञानी काकभुशुण्डि के पास भेज देते हैं।

(ग) जिज्ञासु-प्रवृत्ति :

गरूड़ जिज्ञासु प्रवृत्ति के हैं। उनके मन में विभिन्न प्रकार की शंकायें अंकुरित होती रहती हैं, जैसे दुर्लभ शरीर कौनसा है? सबसे बड़ा दु:ख एवं सुख कौनसा है? सबसे महान् पुण्य एवं सबसे भयंकर पाप कौनसा है? आदि आदि। फिर वे काकभुशुण्डि से कर्म, ज्ञान एवं भक्ति का विवेचन सुन कर अपनी शंकाओं का समाधान करवा लेते हैं।

(घ) सन्देह-निवारण एवं भक्ति-प्राप्ति :

काकभुशुण्डि से राम की महिमा सुन कर गरूड़ हर्षित हो जाते हैं। वे राम का अनुपम रहस्य जान जाते हैं। तब उनके मोह का नाश हो जाता है। संत-समागम से उन्हें अनुभव होता है कि भक्ति से व्यक्ति का मानसिक परिष्कार होता है एवं वह निर्मल भाव भूमि पर पहुँचता है। इस प्रकार राम के प्रताप को हृदय में धारण कर वे विष्णु-लोक लौट जाते हैं।

3. काकभुशुण्डि :

काकभुशुण्डि महाज्ञानी एवं रामभक्त हैं। वे उत्तर दिशा में सुन्दर नील पर्वत पर बहुत काल से रहते हैं। वे निरन्तर राम-कथा कहते रहते हैं, जिसे भाँति भाँति के श्रेष्ठ पक्षी आदर सहित सुनते हैं। उनकी कृपा से ही पक्षीराज गरूड़ के सारे

भ्रम और संशय मिट जाते हैं। वे राम-भक्ति में प्रवीण, ज्ञानी एवं गुणों के धाम हैं। उनका जीवन कई विशेषताओं से विभूषित है।

(क) महाज्ञानी काकभुशुण्डि :

मोह-ग्रस्त गरुड़ को नारद ब्रह्मा के पास एवं ब्रह्मा शंकर के पास भेजते हैं। शंकर उनके मोह का निवारण न करते हुये उन्हें काकभुशुण्डि के पास भेज देते हैं। काकभुशुण्डि अपने सत्संग के द्वारा गरुड़ को हरि-कथा सुनाते हैं, जिससे गरुड़ का मोह मिट जाता है और श्रीराम के चरणों में उन्हें दृढ़ प्रेम हो जाता है। इस प्रकार परमज्ञानी काकभुशुण्डि के सानिध्य में बैठकर गरुड़ ज्ञानार्जन करते हैं एवं अपने अहंकार से मुक्ति पाते हैं।

(ख) राम-कथा के वक्ता :

काकभुशुण्डि का परम पवित्र आश्रम राम-कथा से गुंजारित है, जहाँ जाते ही पक्षीराज गरुड़ मोह, सन्देह एवं भ्रम से मुक्त हो जाते हैं। वे गरुड़ को 'रामचरितमानस' का रूपक समझा कर प्रभु राम के अवतार की सम्पूर्ण कथा कहते हैं, जिसे सुन कर गरुड़ का राम के चरणों में अनन्य प्रेम हो जाता है।

(ग) विनम्रता की प्रतिमूर्ति :

काकभुशुण्डि का स्वभाव अत्यन्त विनम्र है। जब पक्षीराज गरूड़ नील पर्वत पर आते हैं, तब काकभुशुण्डि उन्हें देख कर हर्षित होते हैं। वे गरुड़ का आदर-सत्कार करके उनकी कुशलता पूछते हैं एवं उन्हें सुन्दर आसन प्रदान करते हैं। वे उनकी पूजा करके उनसे कहते हैं "मैं आपके दर्शनों से कृतार्थ हो गया हूँ। आप जो आज्ञा दें वही करूँ। हे प्रभु! आप किस कार्य के लिये आये हैं?" काकभुशुण्डि के ये वचन उनकी विनम्रता के द्योतक हैं।

(घ) बाल-लीलाओं का रसास्वादन :

राम उनके इष्टदेव हैं। जब-जब राम मनुष्य शरीर धारण करते हैं एवं भक्तों के लिये बहुत-सी लीलायें करते हैं तब काकभुशुण्डि अयोध्या आते हैं और बाल-लीलाओं को देख कर हर्षित होते हैं। वे प्रभु राम का जन्मोत्सव एवं शिशु-लीला देख कर अपने नेत्रों को सफल करते हैं। वे छोटे-से कौओे का रूप धारण कर श्रीराम के बाल-चरित्र को देखते हैं एवं भगवान् की जूठन खा कर अपने को धन्य समझते हैं।

(ड़) राम-कृपा से अनुग्रहीत :

काकभुशुण्डि को भगवान् राम ने अपनी व्यापकता का दर्शन कराया है। काकभुशुण्डि उनके उदर में सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के दर्शन करते हैं एवं प्रभु की प्रभुता का स्मरण कर अपने शरीर की सुध-बुध भूल जाते हैं। उनकी बुद्धि भ्रमित हो जाती है। लेकिन प्रभु अपना कर-कमल उनके सिर पर रख कर माया का प्रभाव रोक देते हैं एवं उनके सम्पूर्ण दुःख को हर लेते हैं।

(च) प्रभु से अनन्य भक्ति की याचना :

भगवान् राम प्रसन्न होकर काकभुशुण्डि को वरदान माँगने के लिये कहते हैं। वे उन्हें, सिद्धियाँ, मोक्ष, ज्ञान, विवेक, वैराग्य एवं तत्त्वज्ञान में से अपनी इच्छानुसार कुछ भी माँगने के लिये कहते हैं। काकभुशुण्डि जानते हैं कि भक्ति से रहित ये सब गुण उसी प्रकार फीके हैं जैसे लवण के बिना व्यंजन! इसलिये वे भगवान् की अविरल, अनन्य एवं निष्काम भक्ति की ही याचना करते हैं।

(छ) पूर्वजन्मों की स्मृति :

काकभुशुण्डि को अपने पूर्व जन्मों की स्मृति है। वे कई योनियों में जन्म लेते हैं एवं गरुड़ को अपने तीन जन्मों की कहानी सुनाते हैं। पहले वे अयोध्या में शूद्र के रूप में जन्म लेते हैं, जो शिव-भक्त हो कर भी अन्य सभी देवताओं की निन्दा करता है। फिर वह उज्जैन में जाकर एक शिव-भक्त ब्राह्मण को अपना गुरु बनाते है, जो हरि एवं हर, दोनों के भक्त थे। अपने गुरु का आदर न करने के कारण शिवजी के शाप से वे सर्प हो जाते हैं। फिर वे ब्राह्मण का शरीर प्राप्त करके लोमश ऋषि से ज्ञान प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं। अपने अभिमान के कारण वे लोमश ऋषि के कोप के भाजन बनते हैं एवं उनके श्राप से कौअे का शरीर प्राप्त करते हैं। इसी देह में उन्हें भगवद्-भक्ति का साक्षात्कार होता है।

4. सम्पाति :

ये जटायू के भाई हैं। इनका चरित्र अद्भुत एवं कई विशेषताओं से ओत-प्रोत हैं :

(क) साहसी एवं शक्तिशाली वीर :

वे युवावस्था में अपने अनुज जटायु के साथ आकाश में उड़ कर सूर्य के निकट चले जाते हैं। सूर्य का तेज न सह सकने के कारण जटायु वापस लौट आते हैं, लेकिन सम्पाति सूर्य के निकट पहुँच जाते हैं। अतः उनके पँख जल जाते हैं और

वे चीख मार कर भूमि पर गिर पड़ते हैं। तब से वे समुद्र के किनारे पर्वत की कन्दरा में रहने लगते हैं।

(ख) सम्पाति का भ्रातृ-प्रेम :

सीता-सुधि के लिये आये हुये वानरों के वार्त्तालाप को सुन कर, वानरों को खाने के हेतु से वे कन्दरा से बाहर आते हैं। लेकिन जटायु का वृत्तान्त सुन कर वे उन्हें अभयदान दे देते हैं। फिर वे समुद्र के किनारे पर आकर अपने भ्राता जटायु को तिलांजलि दे कर उनकी श्राद्धादि क्रियायें करते हैं।

(ग) तीव्र-दृष्टि :

गिद्ध होने के कारण से उनकी दृष्टि अत्यन्त तेज है। वे देख कर बता देते हैं कि सीता लंका में अशोक-वाटिका में सोच में निमग्न बैठी है। सम्पाति को दुःख है कि वे अपनी वृद्धावस्था के कारण वानरों की सहायता करने में असमर्थ हैं।

(घ) राम-कृपा में आस्था :

वे वानरों को, निराशा त्याग कर धैर्य से प्रयत्नशील रहने के लिये प्रेरित करते हैं। वे स्वयं अपना उदाहरण देते हुये कहते हैं कि उनका पँख-विहीन शरीर बेहाल था; लेकिन अब भगवत्कृपा से पँख उगने से कैसा सुन्दर हो गया है! वे वानरों का सान्त्वन करते हुये कहते हैं, "तुम तो उनके दूत हो; जिनका नाम स्मरण करके पापी भी भव-सागर से तर जाते हैं। अतः कायरता त्याग कर श्रीराम को हृदय में धारण करके अपना कार्य करो।"

5. जयन्त

जयन्त देवराज इन्द्र का पुत्र है। वह राम-विरोधी है। उसकी चारित्रिक विशषतायें इस प्रकार हैं:

(क) कुटिल एवं मन्दमति :

जयन्त कुटिल एवं मन्दबुद्धि है। वह कौओ का रूप धारण कर राम के बल की परीक्षा करना चाहता है। वह सीता के चरणों में चोंच मार कर भागता है। इस प्रकार वह प्रभु राम से छल करता है। तब राम धनुष पर सींक का बाण संधान करते हैं। मंत्र से प्रेरित वह बाण उसका पीछा करता है।

(ख) कायरता-पूर्ण पलायन :

वह राम के ब्रह्म-बाण को देख कर भयभीत हो कर भागता है। वह अपना

वास्तविक रूप धर कर अपने पिता इन्द्र के पास जाता है; लेकिन राम-द्रोही जान कर वे उसे शरण नहीं देते। वह भय एवं निराशा से ग्रस्त हो कर ब्रह्म-लोक, शिव-लोक आदि समस्त लोकों में भागता फिरता है; लेकिन उसे शरण देना तो दूर रहा, किसी ने बैठने तक को नहीं कहा।

(ग) शरणागत-वत्सल की शरण :

देवर्षि नारद को जयन्त पर दया आ जाती है और वे उसे प्रभु राम की शरण में जाने का परामर्श देते हैं। भयभीत जयन्त राम की शरण में जाकर उनसे अपनी रक्षा की याचना करता है। वह स्वीकार करता है कि अपनी मन्दबुद्धि के कारण वह उनके अतुलित बल एवं सामर्थ्य को जान नहीं पाया। कृपालु राम उसकी आर्त्त-वाणी पर द्रवित हो उठते हैं एवं उसे एकाक्षी (काना) करके छोड़ देते हैं। इस प्रकार रामाश्रय से वह अपनी प्राणों की रक्षा करता है।

[4] अन्य मानवेतर प्राणी :

गोस्वामी तुलसीदास ने राक्षस, वानर, भालू एवं पक्षियों के अतिरिक्त अन्य मानवेतर प्राणियों का चित्रण भी 'रामचरिमानस' में किया है:-

1. समुद्र :

समुद्र सरिताओं का स्वामी है जो सदा अपनी मर्यादा में रहता है। उसकी मान्यता है कि पृथ्वी, जल, अग्नि, आकाश और वायु, ये सभी स्वभाव से ही जड़ है। वे सदा अपने स्वभाव में ही स्थित रहते हैं और अपने सनातन मार्ग को नहीं छोड़ते। वह स्वयं अथाह एवं अगाध है, जिसे कोई पार नहीं कर सकता। उसकी स्वयं की मान्यता है कि यदि उसकी थाह मिल जाय, तो यह विकार उसके स्वभाव का व्यतिक्रम ही होगा।

(क) समुद्र की जड़ता :

राम ससैन्य लंका में जाने हेतु समुद्र से मार्ग माँग रहे हैं। वे तीन दिन तक उसकी उपासना करते हैं; लेकिन वह आधि-दैविक रूप में उनके समक्ष प्रकट नहीं होता है। तब राम कुपित होकर कहते हैं कि शान्ति, क्षमा, सरलता एवं मधुर-भाषण सत्पुरुषों के गुण हैं। इनका प्रयोग गुण-हीन व्यक्ति पर करने से वह गुणवान पुरुष को भी असामर्थ्यवान समझ लेता है। इसलिये ऐसे लोगों पर कठोर दण्ड का प्रयोग ही उचित है। वे भयानक अग्निबाण का सन्धान करते हुये लक्ष्मण से कहते हैं, "लक्ष्मण! देखो यह समुद्र कैसा दुष्ट है! मैं इसके तीर पर आया हूँ; लेकिन इस दुरात्मा ने

BARR. BALASAHEB KHARDEKAR LIBRARY SHIVAJI UNIVERSITY, KOLHAPUR

दर्शन करके भी मेरा अभिनन्दन नहीं किया है। यह समझता है कि यह साधारण मनुष्य वानरों के साथ मिल कर उसका क्या बिगाड़ सकता है! अतः इसे मैं सुखाये डालता हूँ।''

पश्य लक्ष्मण दुष्टोऽसौ वारिधिर्मामुपागतम्।
नाभिनन्दति दुष्टात्मा दर्शनार्थं ममानघ॥
जानाति मानुषोऽयं मे किं करिष्यति वानरैः।
अद्य पश्य महाबाहो शोषयिष्यामि वारिधिम्॥ [83]

(ख) भयभीत समुद्र द्वारा शरणागति :

राम का रौद्र-रूप देख कर समुद्र भयभीत एवं उद्विग्न हो उठता है। वह सोने के थाल में अनेक रत्नों को भर कर, नम्रता से ब्राह्मण के रूप में प्रकट होता है। वह प्रभु राम के चरण पकड़ कर अपने सब दोषों के लिये क्षमा माँगता हैं। फिर वह ऐसा उपाय बताता है, जिससे सेतु का निर्माण हो कर सेना समुद्र पार चली जाय। वह यह भी सुझाव देता है कि नल-नील जैसे कुशल शिल्पकार सेतु का निर्माण करें। तत्पश्चात् समुद्र श्रीराम के चरणों की वन्दना करके चला जाता है।

2. अन्य मानवेतर प्राणी :

गोस्वामीजी ने 'रामचरितमानस' में राक्षस, वानर, भालू, पक्षी आदि के अतिरिक्त अन्य जड़-चेतन, चर-अचर मानवेतर प्राणियों का भी चरित्र-चित्रण किया है:-

(क) पशु :

प्रेम की दशा में सभी पशु आनन्द-मग्न दिखाई देते हैं। चित्रकूट में हाथी, सिंह, बन्दर, सूअर एवं हरिण आपसी वेर छोड़ कर मुक्त विचरण करते हैं और प्रभु राम की छवि को देख कर प्रसन्न होते हैं। लेकिन वियोग के अवसर पर घोड़े, हाथी, हरिण, गाय, बैल, एवं बकरी शिथिल, उदास एवं व्याकुल दिखाई देते हैं। वे न तो घास चरते हैं और न पानी पीते हैं, केवल नेत्रों से जल बहाते हैं। बिछुड़ने के समय घोड़े हिनहिना कर अपना दुःख व्यक्त करते हैं।

(ख) पक्षी एवं भ्रमर :

पपीहे, मोर, कोयल, चकवे, तोते, मैना, सारस, हंस और चकोर, राम-लक्ष्मण को वन की ओर आते देख कर प्रेमानन्द में मग्न हो जाते हैं। लेकिन वियोगावस्था में सभी पशु-पक्षी स्तब्ध दिखाई देते हैं। सीता के वियोग में व्यथित राम पशु-पक्षियों एवं भौरों से सीता का अता-पता पूछते हैं। नील पर्वत पर पक्षी-गण काकभुशुण्डि से राम-कथा का श्रवण करते हैं।

(ग) वृक्ष एवं लतायें :

प्रेम एवं आनन्द की दशा में झूमनेवाले वाटिका के वृक्ष एवं लतायें दुःख के अवसर पर कुम्हलाने लगती हैं। नदी और तालाब भी विषाद के अवसर पर भयानक दिखने लगते हैं।

(घ) जलचर प्राणी :

घड़ियाल, मच्छ और सर्प जैसे जलचर प्राणी प्रभु-दर्शन करके हर्षित दिखाई देते हैं। मछलियाँ वियोग में उदास हो जाती हैं।

(ङ) नदियाँ एवं तीर्थराज प्रयाग :

गंगा एवं गोदावरी प्रभु-दर्शन करके हर्षित होती है। गंगा के हृदय में राम के चरण-स्पर्श का मोह उत्पन्न होता है। गंगा एवं तीर्थराज प्रयाग हर्षित होकर सीता को आशीर्वाद देते है। आकाश और प्रयागराज में धन्य-धन्य की ध्वनि सुनाई देती है।

(च) पर्वत एवं पृथ्वी :

मार्ग की कठोरता से राम, लक्ष्मण एवं सीता के सुकोमल चरणों को कष्ट न हो इसलिये पृथ्वी कुश, काँटे, कंकड़, दरारें आदि कठोर वस्तुओं को छिपा कर मार्ग को कोमल बनाती है। मैनाक पर्वत हनुमान से विश्राम करने के लिये कहता है।

(छ) देवता, नाग, किन्नर एवं दिग्पाल :

देवता, नाग, किन्नर एवं दिग्पाल भी समय-समय पर प्रकट हो कर अपनी भूमिका निभाते हैं। देवता हर्षित होने पर पुष्प-वृष्टि करते हैं एवं दुःख में दुःखी होते हैं। इन्द्र युद्ध-भूमि में अमृत-वर्षा करते हैं। अग्नि-देवता स्वयं प्रकट हो कर राम को सीता समर्पित करते हैं। सर्पों की माता सुरसा हनुमान के बल-बुद्धि की परीक्षा लेती है।

(ज) पुष्पक विमान :

पुष्पक विमान आज्ञाकारी सेवक है। वह राम की आज्ञा से अपने स्वामी कुबेर के पास लौट जाता है। उसे अपने स्वामी के पास जाने की प्रसन्नता है; लेकिन प्रभु राम से बिछुड़ने का दुःख भी है।

(झ) चारों वेद :

चारों वेद भाटों का रूप धारण कर प्रभु राम का गुणगान करते हैं।

इस प्रकार गोस्वामीजी ने विभिन्न मानवेतर प्राणियों को 'रामचरितमानस' में समाविष्ट किया है।

मानवेतर प्राणियों का चित्रण-गोस्वामीजी का उद्देश्य

गोस्वामीजी ने 'रामचरितमानस' में मानवेतर प्राणियों का चित्रण सोद्देश्य किया है। उन्होंने बताया है कि समाज में व्याप्त आसुरी शक्तियाँ जब समाज के लिये अभिशाप एवं पृथ्वी के लिये भार-स्वरूप हो जाती हैं; तब दैविक शक्ति अवतरित हो कर सामान्य जन समुदाय (वानर भालू आदि) को संगठित करके उन राक्षसी शक्तियों का पराभव करती हैं।

1. दुराचारी व्यक्ति ही राक्षस :

गोस्वामीजी ने हिंसा करने वाले, पर-धन एवं पर-दारा का अपहरण करने वाले, माता, पिता एवं पूज्य-जनों को न मानने वाले, नगर, गाँव, पुर, मन्दिर एवं घरों में आग लगाने वाले, निर्दयी, क्रूर, कुटिल, लम्पट, स्वार्थी, अभिमानी, द्वेषी, एवं दूसरों के हित की हानि करने वाले व्यक्तियों को राक्षस की संज्ञा दी है। गोस्वामीजी का यह उद्घोष बहुत ही महत्त्वपूर्ण है कि जिन व्यक्तियों में ये अवगुण हैं, वे निश्चित ही राक्षस हैं :-

जिन्ह के यह आचरन भवानी।
ते जानेहु निसिचर सब प्रानी॥ [84]

2. रावण-तुलसीदास के समकालीन अन्यायी बादशाहों का प्रतीक :

रावण का अर्थ है रुलाने वाला। वह त्रिलोक का उत्पीड़क था। वह तत्कालीन अन्यायी बादशाहों का प्रतीक है, जो सत्ता के मद में चूर होकर प्रजा को सताते थे। गो, ब्राह्मणों तथा निरपराधियों पर अत्याचार करते थे। गोस्वामीजीने 'कवितावली' में रावण का वर्णन करते हुये सालिम (दृढ़), फहम (समझ), रहम (दया), खलक (संसार), हलक (कंठ) जैसे फारसी शब्दों का प्रयोग किया है। गोस्वामीजीने रावण की पराजय का वर्णन कर बादशाहों द्वारा पीड़ित प्रजा का सान्त्वन किया है। देवीक-न्याय का संकेत देकर उनका धीरज बँधाया है।

(ख) तान्त्रिकता की पराजय :

रावण तान्त्रिक है। उसकी ध्वजा पर तान्त्रिकता का चिन्ह-नर-सिर-कपाल अर्थात् मनुष्य की खोपड़ी का चिन्ह है।

ध्वजं मनुष्यशीर्षं तु तस्य चिच्छेद नैकधा। [85]

इन सब वाम-मार्गीय क्रियाओं के और अतुलनीय आसुरी शक्तियों के बावजूद भी रावण की पराजय दिखाकर गोस्वामीजी ने वाम-मार्ग की निन्दा की है।

(ग) दुराचारी की दुर्गति :

दुराचारी व्यक्ति की दुर्गति निश्चित होती है। रावण दुराचारी है। वह नारी समाज को भोग्या समझ कर उसके प्रति असहिष्णुता का व्यवहार करता है। फलतः वह ससैन्य मारा जाता है और उसके कुल में कोई रोने वाला भी नहीं बचता।

(घ) अभिमानी का घोर पतन :

अभिमानी व्यक्ति उस सच्चाई को नहीं देख पाता, जो उसके अभिमान के प्रतिकूल पड़ती है। रावण बड़ा अभिमानी है। वह किसी के भी परामर्श की ओर ध्यान नहीं देता। परिणामतः उसका घोर पतन हो जाता है।

(ड़) कुल की उच्चता निरर्थक :

व्यक्ति का मूल्याँकन उसके अच्छे या बुरे आचरण से होता है, कुल की उच्चता का अहंकार निरर्थक है। रावण उच्च कुल में जन्म लेकर भी राक्षस कहलाता है जब कि गिद्ध और कौअे की योनि प्राप्त प्राणी परम भागवत हो गये हैं।

(च) कुमार्ग-गामी की श्रीहीनता :

कुमार्ग पर पैर रखते ही व्यक्ति के शरीर में तेज, बुद्धि एवं बल लेश मात्र भी नहीं रहते। त्रैल्योक-विजयी रावण सीता-हरण के लिये संन्यासी के वेष मे इधर-उधर ताकता हुआ, भयभीत हो कर जाता हैं:-

इमि कुपंथ पग देत खगेसा।
रह न तेज तन बुधि बल लेसा।। 86

(छ) मर्यादा की रक्षा आवश्यक :

प्रत्येक व्यक्ति को मर्यादा की सीमा में रहना चाहिये। मर्यादा-भंग होने से वह सुरक्षित नहीं रह सकता। रावण सीता का अपहरण तब तक नहीं कर सका, जब तक वह लक्ष्मण द्वारा खींची हुई रेखा में थी। धर्म व्यक्ति की तभी तक रक्षा करता है, जब तक वह धर्म की रक्षा करता है।

धर्म एव हतो हन्ति, धर्मो रक्षित रक्षितः।

(ज) सत्यमेव जयते नानृतम् :

युद्ध भूमि में राम को पैदल एवं रावण को सुसज्जित रथ पर देख कर विभीषण को शंका होती है कि इस स्थिति में राम किस प्रकार विजयी हो सकेंगे? तब राम

उनसे कहते हैं कि विजय प्राप्त करने के लिये धर्ममय रथ की आवश्यकता होती है। जिसके पास धर्ममय रथ है, उसके लिये जीतने को कहीं शत्रु ही नहीं है।

(झ) अन्त मति सो गति :

अन्तिम समय में यदि किसी का ध्यान भगवान् की ओर चला जाता है या वह भगवान् का स्मरण करता है, तो उसे सद्‌गति प्राप्त हो जाती है। रावण भी अन्तिम समय तक राम को ललकारते हुये उनका स्मरण करता रहता है। इस प्रकार वह प्राण त्याग कर सद्‌गति को प्राप्त हो जाता है।

(ञ) रावण व्यक्तिवाद का प्रतीक :

राम विश्वात्मवादी हैं, अर्थात् मैं हूँ और दूसरे भी हैं। लेकिन रावण व्यक्तिवाद का प्रतीक है। व्यक्तिवाद अर्थात् मैं और मेरे भोग। व्यक्तिवाद जीवन में स्वयं ही आ जाता है, उसके लिये प्रयत्न या परिश्रम की आवश्यकता नहीं होती। लेकिन विश्वात्मवाद के लिये त्याग, तपस्या और अथक परिश्रम अपेक्षित है। अंत में विजय विश्वात्मवादी की होती है और भोगवादी-व्यक्तिवादी की हार!

3. कुंभकर्ण :

तामसी आहार से तमोगुण का प्राबल्य :

तुलसीदासजी ने कुंभकर्ण के प्रसंग में तामसी आहार के दुष्प्रभाव की ओर इंगित किया है। तामसी आहार से व्यक्ति विवेक-शून्य हो जाता है एवं वह भले-बुरे का निर्णय नहीं कर सकता। कुंभकर्ण जगते ही रावण को राम की शरण में जाने की सलाह देता है; लेकिन भैंसे खाकर एवं मद्य पीकर वह गर्जना करता हुआ राम से युद्ध करने के लिये चल पड़ता है। यह कुंभकर्ण के तामसी आहार के दुष्प्रभाव का ही परिणाम है। प्रारम्भ में वह युद्ध-भूमि में विभीषण से गले मिलता है; लेकिन बाद में उसके मन एवं शरीर पर तामसी आहार का प्रभाव बढ़ने लगता है। वह विभीषण से कहता है, "मुझे अपना-पराया नहीं सूझता है इसलिये अब तुम मेरे सामने से चले जाओ।"

4. विभीषण :

(क) परम वैष्णव के जीवन का प्रतीक :

विभीषण का जीवन एक परम वैष्णव के जीवन का प्रतीक है। उनके भवन में

भगवान का मन्दिर है। उनके महल पर रामायुध (धनुष-बाण) का चिन्ह अंकित है। चारों ओर तुलसी के वृक्ष-समूह लगे हुये हैं। वे जग कर उठते ही राम-नाम का स्मरण (उच्चारण) करते हैं। ये सभी परम वैष्णव के लक्षण हैं।

(ख) सत्संग का महत्त्व :

विभीषण के जीवन के द्वारा संत-समागम का महत्त्व स्थापित किया गया है। सत्संग विवेक का जनक एवं हरि-कृपा सत्संग की जननी है। सत् और असत् का ज्ञान ही विवेक कहलाता है। मानव को विवेक प्राप्ति के लिये सत्संग आवश्यक ही नहीं बल्कि अनिवार्य है।

(ग) मोक्ष का सुलभ साधन प्रपत्ति :

विभीषण के जीवन के द्वारा भगवान् की शरणागति का महत्त्व प्रतिपादित किया गया है। प्रपत्ति (शरण) में कर्म, ज्ञान एवं भक्ति-इन तीनों का समन्वय है। इसके द्वारा भगवान् का सामीप्य प्राप्त किया जा सकता है। यदि कोई निश्छल भाव से मन, वचन और कर्म से भगवान् की शरण ग्रहण कर लेता है, तो उसके योगक्षेम का मार स्वयं भगवान् वहन करते हैं- योगक्षेमं वहाम्यहम् (श्रीमद् भगवद्गीता)।

5. मेघनाद :

वाममार्गीय हिंसा एवं क्रियायें निरर्थक :

मेघनाद के जीवन के द्वारा वाममार्गीय हिंसा एवं बलि, माँस-भक्षण, सुरा-प्राशनादि क्रियाओं की व्यर्थता प्रकट की गई है। मेघनाद तान्त्रिक है। वह विजय-प्राप्ति के लिये अपवित्र यज्ञ करके जीवित कृष्ण छाग (काले बकरे) एवं भैंसे की बलि देता है। लेकिन इन वाममार्गीय क्रियाओं का प्रश्रय लेने के बाद भी उसकी पराजय हो जाती है। इससे यही सिद्ध होता है कि वाममार्गीय हिंसादिक क्रियायें निरर्थक हैं। उनसे जीवन का कल्याण होना संभव नहीं है।

6. शूर्पणखा :

(क) अनियन्त्रित 'काम' के दुष्परिणाम :

शूर्पणखा कामातुरता एवं विलासिता का प्रतीक है। संस्कृत साहित्य में 'कामातुराणां न भयं न लज्जा' कहा गया है। विलासिता जन-जीवन में चित्ताकर्षक एवं भव्य रूप लेकर प्रवेश करती है; लेकिन यदि मनुष्य चारित्रिक दृढ़ता दिखा कर कठोरता से उसका दमन करे, तो वह निरर्थक सिद्ध जाती है।

(ख) एक पत्नीव्रत की प्रस्थापना :

शूर्पणखा के प्रसंग के द्वारा एक पत्नीव्रत का महत्त्व प्रस्थापित किया गया है। राम शूर्पणखा से कहते हैं, "मैं तो विवाहित हूँ लेकिन लक्ष्मण कुँआरा है, अतः उसके पास जाओ।"

गोस्वामीजी का भाव यह है कि जो विवाहित है, वह दूसरे विवाह की बात ही न सोचे। वस्तुतः पुरुष एवं स्त्री दोनों ही मानव-समाज के अभिन्न अंग हैं जो संयम, समता, स्नेह और सद्भावना की रज्जु से आबद्ध हो कर समाज की प्रगति में सहायक हो सकते हैं। इसलिये गोस्वामीजी केवल स्त्रियों के पतिव्रता होने पर ही जोर नहीं देते; बल्कि पुरुषों के एकपत्नीत्व पर भी जोर देते हैं। राम-राज्य में तो पुरुष भी एक पत्नीव्रती हैं।

एकनारि ब्रत रत सब झारी।
ते मन बच क्रम पति हितकारी॥ [87]

7. मारीच :

समरांगण में वीरगति से मोक्ष-प्राप्ति :

मारीच रावण की अपेक्षा राम के हाथों मारा जाना श्रेयस्कर समझता है। इसका भावार्थ यह है कि राजा के हाथों बलपूर्वक प्राण-दण्ड पाकर कष्ट भोगने की अपेक्षा समरांगण में मरना श्रेष्ठ है क्योंकि युद्ध-भूमि में प्राण त्यागने वाला वीरगति (सद्गति) को प्राप्त करता है।

8. लंकिनी :

सत्संग की महिमा का बखान :

लंकिनी के प्रसंग में सत्संग की महिमा का बखान किया गया है। क्षण-मात्र के सत्संग का ही प्रभाव है कि लंकिनी हनुमान को श्रीराम को हृदय में धारण करके अपना कार्य करने के लिये कहती है। स्वर्ग और मोक्ष के सब सुखों को तराजू के एक पलड़े में रखा जाय, तो भी वे सब मिल कर दूसरे पलड़े में रखे हुये उस सुख की समता नहीं कर सकते, जो क्षण मात्र के सत्संग से प्राप्त होता है :

तात स्वर्ग अपबर्ग सुख धरिअ तुला एक अंग।
तूल न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सतसंग॥ [88]

[2] वानर-भालू :

दास्य-भाव की भक्ति का प्रतिपादन :

वानरों एवं भालुओं से राम का प्रेम बता कर गोस्वामीजी ने दास्य-भाव की भक्ति का प्रतिपादन किया है। अयोध्या से वानर-भालुओं को विदा करते समय राम कहते हैं, "सेवक सभी को प्रिय लगते हैं, यह नीति है।" उनका तो दास पर स्वाभाविक रूप से ही विशेष प्रेम है :

सब के प्रिय सेवक यह नीती।
मोरें अधिक दास पर प्रीती॥ 89

1. हनुमान :

गोस्वामीजी ने हनुमान के रूप में आज्ञा-पालन, सेवा-भाव, शौर्य-प्रदर्शन एवं विवेक-प्रयोग आदि गुणों से सम्पन्न एक आदर्श चरित्र प्रस्तुत किया है।

(क) आदर्श कर्मयोगी भक्त :

हनुमान कर्मयोगी भक्त है। वीरता, गतिमत्ता, निर्भयता, तत्परता, सामयिक चेतना, सेवा-परायणता, आस्तिकता एवं विनयशीलता आदि जो गुण हनुमान के जीवन में प्राप्य हैं, वे प्रत्येक व्यक्ति के जीवन को ऊँचा उठाने की शिक्षा देते हैं। उनके जीवन का उद्देश्य 'योगः कर्मसु कौशलम्' है।

(ख) दास्य-भक्ति के प्रतीक :

हनुमान का सम्पूर्ण जीवन दास्य-भाव की भक्ति से ओत-प्रोत है। वे राम के प्रिय सेवक हैं; क्योंकि वे अनन्यगति हैं। अनन्य वही है जिसकी बुद्धि कभी नहीं टलती कि 'मैं सेवक हूँ और यह चराचर जगत् मेरे स्वामी भगवान् का रूप है।' हनुमान को अपने प्रभु की कृपा का पूर्ण विश्वास है।

(ग) सेवा से देवत्व की प्राप्ति :

सेवा से देवत्व की प्राप्ति की जा सकती है। अपनी सेवा के कारण ही, जहाँ-जहाँ राम की पूजा है, वहाँ-वहाँ हनुमान के भी दर्शन होते हैं। सीतान्वेषण के समय लंका में हनुमान जिस-जिस महल में प्रवेश करते हं, उसे गोस्वामीजी ने 'मन्दिर' शब्द से सम्बोधित किया है। लेकिन विभीषण के महल को वे बाहर से ही देखते हैं इसलिये उसके लिये 'भवन' शब्द का प्रयोग किया गया है।

2. अंगद :

अंगद भी दास्य-भक्ति के प्रतीक हैं। वे एक सच्चे भक्त हैं, जो भगवान् के प्रेम में विह्वल हो कर, तन, मन, धन, सब कुछ अर्पण करके भगवान् की दास्य-भाव की भक्ति ही चाहते हैं। वे प्रभु राम को स्वामी, गुरु, माता, पिता सब कुछ मान कर एवं स्वयं को ज्ञान, बुद्धि एवं बल से हीन, दीन सेवक मान कर, उनकी शरण में रहना चाहते हैं। ये सभी एक आदर्श दास्य-भाव के भक्त के गुण हैं।

3. सुग्रीव :

(क) भोगों की लिप्तता का प्रभाव :

व्यक्ति भोगों में लिप्त हो कर कर्तव्य-च्युत हो जाता है। सुग्रीव स्वकार्य सिद्ध हो जाने पर भोग-विलास में आकण्ठ डूब जाते हैं एवं सीतान्वेषण का कार्य विस्मृत कर देते हैं। मंत्री हनुमान के परामर्श से उनका विवेक जाग्रत होता है और वे अपने कर्तव्य-पालन के लिये सचेष्ट हो उठते हैं।

(ख) विधवा-विवाह का समर्थन :

जिस अपराध के लिये राम ने बालि-वध किया था, वही अपराध सुग्रीव भी करते हैं। सुग्रीव बालि-वध के बाद तारा को पत्नी के रूप में ग्रहण कर लेते हैं। लेकिन फिर भी राम ने उनके सम्मान में कमी नहीं आने दी। गोस्वामीजी का उद्देश्य यहाँ विधवा-विवाह का समर्थन करना है।

4. बालि :

(क) सामाजिक सुव्यवस्था के लिये सच्चरित्रता आवश्यक :

गोस्वामीजी सामाजिक सुव्यवस्था के लिये सच्चरित्रता आवश्यक मानते हैं। छोटे भाई की पत्नी, बहन, पुत्र-वधू एवं कन्या- इन चारों को समान समझना जाना चाहिये। इन्हें कुदृष्टि से देखने वाले का वध करने में कोई पाप नहीं होता है।

(ख) दुराचारी, अभिमानी का पतन :

अभिमानी व्यक्ति चाहे कितना ही बलवान हो, उसका पतन निश्चित है। बालि अभिमान के वशीभूत हो कर अपने अनुज सुग्रीव की पत्नी को छीन लेता है। वह तारा के सत्परामर्श की ओर भी ध्यान नहीं देता। अतः उसका पतन हो जाता है।

5. जामवन्त :

सगुण भक्ति का प्रतिपादन :

तुलसीदासजी ने जामवन्त के जीवन द्वारा सगुण भक्ति का प्रतिपादन किया है। जामवन्त अंगद से कहते हैं, "राम को मनुष्य न मानो, उन्हें निर्गुण ब्रम्ह, अजेय एवं अजन्मा समझो। हम सब सेवक अत्यन्त बड़भागी हैं, जो निरन्तर सगुण ब्रम्ह (श्रीराम) में प्रीति रखते हैं" :

हम सब सेवक अति बड़भागी।
संतत सगुण ब्रम्ह अनुरागी॥ [90]

6. नल-नील :

राम-कृपा से पत्थर भी तैर जाते हैं :

नल-नील के प्रसंग के द्वारा तुलसीदासजी ने बताया है कि राम-कृपा से असंभव कार्य भी संभव हो जाता है। जो पत्थर स्वयं डूब जाते हैं एवं दूसरों को डुबो देते हैं, वे ही जलयान के समान स्वयं तैरनेवाले एवं दूसरों को पार ले जाने वाले हो गये। यह न तो समुद्र की महिमा है, न पत्थरों का गुण और न वानरों की ही कोई करामात है। यह तो राम-कृपा से ही संभव हुआ है :

श्री रघुवीर प्रताप ते सिंधु तरे पाषान।
ते मतिमन्द जे राम तजि भजहिं जाइ प्रभु आन॥ [91]

[3] गृध्रराज जटायु :

1. (क) परमार्थ के लिये प्राणोत्सर्ग सर्वोत्तम धर्म है :

जटायु परोपकार का प्रतीक है। संसार में सर्वोच्च धर्म परमार्थ ही है। जिनके मन में परमार्थ की भावना रहती है उनके लिये संसार में कुछ भी दुर्लभ नहीं है। परमार्थी व्यक्ति को कुछ भी प्राप्त करने की आवश्यकता नहीं रहती; क्योंकि वह पूर्णकाम हो जाता है।

(ख) जटायु परम बड़भागी है :

गोस्वामीजी ने लक्ष्मण, अंगद, जामवन्त आदि के लिये बड़भागी शब्द का प्रयोग किया है। अहल्या के लिये अतिशय बड़भागी शब्द का प्रयोग किया है; क्योंकि उसे

SHIVAJI UNIVERSITY LIBRARY

प्रभु राम की चरण-रज का स्पर्श प्राप्त हुआ है। लेकिन परमार्थ के लिये आत्मोत्सर्ग करने वाले जटायु के लिये तुलसीदासजी ने परम बड़भागी शब्द का प्रयोग किया है :

राम काज कारन तनु त्यागी।
हरि पुर गयउ परम बड़भागी॥ 92

(ग) व्यक्ति जन्म से नहीं, कर्म से महान् होता हैं :

कोई भी व्यक्ति जन्म से महान् नहीं होता, वह अपने सत्कार्यों से महानता प्राप्त करता है। जटायु गिद्ध है, सामिष भोजी है; लेकिन परमार्थ के कारण उनका जीवन धन्य हो गया है। स्वयं राम ने उन्हें अपने पिता राजा दशरथ के समान पूज्य माना है।

2. गरुड़ :

(क) ज्ञान-प्राप्ति के लिये जिज्ञासा-भाव आवश्यक :

गोस्वामीजी ने गरुड़ को प्रतीक बना कर उन शंकाओ को मुखरित किया है, जो जन-मानस में उठती रहती हैं। गरुड़ को एक जिज्ञासू के रूप में प्रस्तुत करके यह बताया गया है कि जिज्ञासू ही ज्ञान का सच्चा अधिकारी होता है।

(ख) हरि-कृपा से संत-समागम :

हरि-कृपा एवं सन्त-समागम दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। हरि-कृपा के बिना सन्त-समागम संभव नहीं है। सच्चे सन्त उसी को उपलब्ध होते हैं, जिस पर भगवान् राम की कृपा होती है।

(ग) श्रेष्ठता का आधार ज्ञान :

गरुड़ पक्षीराज हैं, महाज्ञानी हैं ओर हरि के वाहन भी हैं; लेकिन उन्हें भी ज्ञान-प्राप्ति के लिये एक कौओ के पास जाना पड़ा। वे काक-भुशुण्डि के सानिध्य में बेठ कर ज्ञानार्जन करते हैं एवं अपने अभिमान से मुक्ति पाते हैं। वास्तव में श्रेष्ठ वही है, जिसके पास ज्ञान है और जो छोटे-बड़े या ऊँच-नीच की भावना से ऊपर उठ जाता है।

3. काकभुशुण्डि :

काकभुशुण्डि के चित्रण का उद्देश्य इस प्रकार हैं :

(क) पुनर्जन्म के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया गया है।

(ख) ज्ञान से भक्ति को श्रेष्ठ बताया गया है; क्योंकि तुलसीकालीन परिस्थितियों में ज्ञान की उपादेयता क्षीण हो गई थी। जन-साधारण का मानसिक स्तर ज्ञान की उपादेयता समझने में असमर्थ था। तुलसीदास को ज्ञान का कर्म एवं भक्ति समन्वित रूप ही सदैव ग्राह्य रहा है।

(ग) दास्य-भाव की भक्ति का प्रतिपादन किया गया है। 'मैं सेवक हूँ और भगवान् मेरे स्वामी है'- इस भाव के बिना संसार-सागर से तरना असंभव है।

(घ) तुलसीदासजी महान समन्वयकारी लोकनायक थे। उन्होंने अपनी रचनाओं में शैव-मत एवं वेष्णव-मत तथा सगुण-निर्गुण का समन्वय किया है।

(ड़) गुरु की अवज्ञा नहीं होनी चाहिये एवं मर्यादा का पालन किया जाना चाहिये।

(च) जन्म से कोई ऊँच या नीच नहीं होता, व्यक्ति का मूल्यॉंकन कर्म से ही होता है। पक्षीराज गरुड़ एक कौओ को अपना गुरु बनाते हैं।

4. सम्पाति :

सम्पाति के चरित्र-चित्रण द्वारा गोस्वामीजी ने भगवत्कृपा की ओर संकेत किया है। सम्पाति का पँख-विहीन शरीर बेहाल था; लेकिन भगत्कृपा से नये पँख उग आते हैं और उनका शरीर सुन्दर हो जाता है।

5. जयन्त :

अपने समर्थ पिता के बल एवं वैभव के कारण उनके कुटिल लड़के किसी को कुछ भी नहीं समझते। ऐसे व्यक्ति कभी-कभी बलाढ्य व्यक्ति से पाला पड़ने पर भारी संकट में पड़ जाते हैं। गोस्वामीजी ने जयन्त के चरित्र-चित्रण के द्वारा यह बताया है कि किसी अन्य व्यक्ति के बल या कीर्ति की बैसाखी के सहारे चलना उचित नहीं है।

[4] समुद्र :

समुद्र आदर्श पात्र नहीं है। 'अध्यात्म रामायण' में उसे 'दुष्ट' शब्द से सम्बोधित किया गया है। गोस्वामीजी ने उसे 'जड़' शब्द की संज्ञा दी है। समुद्र भी अपने को जड़ मानता है एवं उसने स्त्री-समाज के लिये अनुदार शब्दों का प्रयोग करके अपनी जड़ता सिद्ध भी कर दी है :

ढोल गवाँर सूद्र पसु नारी।
सकल ताड़ना के अधिकारी॥ 93

समुद्र के प्रसंग द्वारा यह भी निष्कर्ष निकलता है कि जब प्रेम एवं अहिंसा का मार्ग असफल हो जाता है, तब राजा या शासक को दण्ड का प्रयोग करना पड़ता है। दुष्ट लोगों को भय दिखाये बिना राज्य नहीं चल सकता; क्योंकि उनका हृदय-परिवर्तन संभव नहीं है।

इस प्रकार गोस्वामीजी ने मानवेतर प्राणियों का चित्रण सोद्देश्य किया है।

निष्कर्ष :

यह सम्पूर्ण विश्व भगवदीय शक्ति से परिव्याप्त है। इसलिये गोस्वामीजी ने जड़-चेतन, चर-अचर सभी प्राणियों को राममय मान कर उनकी वन्दना की है। उन्होंने मानव से मानवेतर प्राणियों का सम्बन्ध अटूट माना है। इसलिये उन्होंने 'रामचरितमानस' में मनुष्यों के साथ-साथ राक्षस, वानर, भालू, पशु, पक्षी, नाग, प्रेत, पितर, गन्धर्व, किन्नर एवं समुद्र जैसे मानवेतर प्राणियों को भी समाविष्ट किया है।

समाज में व्याप्त आसुरी शक्तियाँ जब समाज के लिये अभिशाप हो जाती हैं, तब दैविक-शक्ति अवतरित हो कर उन राक्षसी शक्तियों को पराजित करती हैं। दुराचारी एवं अत्याचारी व्यक्ति ही राक्षस है। दुराचारी की दुर्गति एवं अभिमानी का घोर पतन निश्चित है। तान्त्रिकता एवं वाममार्ग त्याज्य है। कुल की उच्चता का अहंकार निरर्थक है। अन्तिम विजय सत्य की ही होती है। राम की विश्वात्मवादी विचार-धारा से रावण की निरंकुश व्यक्तिवादी विचार-धारा पराजित हो जाती है।

तुलसीदासजी ने कुंभकर्ण के प्रसंग से तामसी आहार से तमोगुण का प्राबल्य बताया है। विभीषण का जीवन परम वैष्णव के जीवन का प्रतीक है। प्रभु-कृपा से सत्संग की एवं सत्संग से विवेक की प्राप्ति होती है। मोक्ष का सुलभ साधन प्रपत्ति (भगवद्-शरण) है।

मेघनाद के जीवन के द्वारा वाम-मार्गीय हिंसा एवं बलि-प्रथा की, माँस भक्षण और सुरादि प्राशन की क्रियाओं की व्यर्थता प्रकट की गई है। शूर्पणखा अनियन्त्रित 'कामभाव' का प्रतीक है। उसके प्रसंग के द्वारा एक पत्नीव्रत की प्रस्थापना की गई है। मारीच के जीवन से समरांगण में वीरगति से मोक्ष-प्राप्ति की ओर संकेत है। लंकिनी के प्रसंग में सत्संग की महिमा का वर्णन किया गया है। वानर, भालू आदि दास्य-भाव की भक्ति के प्रतीक हैं। हनुमान एवं अंगद कर्मयोग तथा दास्य-भक्ति के

प्रतीक हैं। हनुमान ने सेवा से देवत्व की प्राप्ति की है। सुग्रीव के जीवन के द्वारा भोगों की लिप्तता के कारण कर्तव्य-च्युतता की ओर संकेत है। सुग्रीव द्वारा तारा को पत्नी-रूप में ग्रहण करने के प्रसंग द्वारा विधवा-विवाह का समर्थन किया गया है। सामाजिक सुव्यवस्था के लिये सच्चरित्रता आवश्यक है एवं अभिमानी का पतन होता है, यह बालि के जीवन द्वारा बताया गया है। जामवन्त के जीवन के द्वारा सगुण-भक्ति का प्रतिपादन किया गया है। राम-कृपा से पत्थर भी पानी में तैर जाते हैं, यह नल-नील के जीवन के द्वारा प्रतिपादित किया गया है।

परमार्थ के लिये प्राणोत्सर्ग करना सर्वोत्तम धर्म है। इसलिये जटायु को 'परम बड़भागी' कहा गया है। व्यक्ति जन्म से नहीं, अपने कर्म से महान् बनता है। ज्ञान-प्राप्ति के लिये जिज्ञासा-भाव आवश्यक है, हरि-कृपा से सन्त-समागम होता है एवं श्रेष्ठता का आधार ज्ञान है, यह गरुड़ के जीवन के द्वारा प्रतिपादित किया गया है।

काकभुशुण्डि के प्रसंग द्वारा पुनर्जन्म के सिद्धान्त एवं दास्य-भक्ति का प्रतिपादन किया गया है। ज्ञान से भक्ति को श्रेष्ठ बताया गया है। शैव-मत एवं वैष्णव-मत का समन्वय किया गया है। गुरु की अवज्ञा नहीं होनी चाहिये एवं मर्यादा का पालन किया जाना चाहिये। व्यक्ति का मूल्याँकन कर्म से होता है, जन्म से नहीं; ऐसा भी सूचित किया गया है।

सम्पाति के प्रसंग से राम-कृपा की ओर संकेत है। जयन्त समर्थ पिता की कुटिल सन्तान का प्रतीक है। समुद्र नारी-समाज के प्रति अनुदार शब्दों का प्रयोग करके अपनी जड़ता सिद्ध करता है। इस प्रकार 'रामचरितमानस' में गोस्वामीजी द्वारा मानवेतर प्राणियों का चित्रण सोद्देश्य किया गया है।

■ □ ■

■ संदर्भ - सूची ■

1. कवितावली / लंकाकाण्ड / 33
   गोस्वामी तुलसीदास
   टीकाकार लाला भगवानदीन
   पृष्ठ 71

2. रामचरितमानस / बालकाण्ड / 180 / 1
   (सटीक मोटा टाइप)
   गोस्वामी तुलसीदास
   टीकाकार हनुमानप्रसाद पोद्दार
   पृष्ठ 171

3. वही / बालकाण्ड / 182 / 2
   पृष्ठ 174

4. वही / सुन्दरकाण्ड / 2 / छन्द 3
   पृष्ठ 717

5. वही / बालकाण्ड / 182 / 3
   पृष्ठ 174

6. श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण / युद्धाकाण्ड / 61 / 20
   (द्वितीय भाग)
   टीकाकार पं. रामनारायणदत्त शास्त्री 'राम'
   पृष्ठ 1225

7. श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण / अरण्यकाण्ड / 39 / 5
   (प्रथम भाग)
   टीकाकार पं. रामनारायणदत्त शास्त्री 'राम'
   पृष्ठ 579

8. श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण / सुन्दरकाण्डम् / 18 / 2
   (द्वितीय भाग)
   अनुवादक पं. रामनारायणदत्त शास्त्री 'राम'
   पृष्ठ 911

9. वही / युद्धकाण्डम् / 109 / 18
पृष्ठ 1395

10. रामचरितमानस / बालकाण्ड / 183 / 1
(सटीक मोटा टाइप)
गोस्वामी तुलसीदास
टीकाकार हनुमानप्रसाद पोद्दार
पृष्ठ 175

11. वही / बालकाण्ड / 180 / 4
पृष्ठ 172

12. वही / लंकाकाण्ड / 102 / 2
पृष्ठ 886

13. कवितावली / सुन्दरकाण्ड / 1
टीकाकार लाला भगवानदीन
पृष्ठ 30

14. वही / उत्तरकाण्ड / 3
पृष्ठ 86

15. श्रीमद् वाल्मीकीय रामायण / युद्धकाण्डम् / 100 / 14
(द्वितीय भाग)
अनुवादक शास्त्री पं. रामनारायण दत्त 'राम'
पृष्ठ 1367

16. वही / उत्तरकाण्डम् / 34 / 40
(द्वितीय भाग)
पृष्ठ 1548

17. रामचरितमानस / लंकाकाण्ड / 16 / 4
(सटीक मोठा टाइप)
टीकाकार पोद्दार हनुमानप्रसाद
पृष्ठ 790

18. वही / लंकाकाण्ड / 32 / 1
पृष्ठ 806

19. महाभारत-खिल भाग हरिवंश / हरिवंश पर्व / अध्याय 41
(श्री. हरिवंश पुराण)
महर्षि वेदव्यास
टीकाकार पाण्डेय पण्डित रामनारायण दत्त शास्त्री 'राम'
पृष्ठ 153

20. कवितावली / सुन्दरकाण्ड / 21
लाला भगवानदीन
पृष्ठ 43

21. रामचरितमानस / बालकाण्ड / 182 (ख)
(सटीक मोठा टाइप)
टीकाकार पोद्दार हनुमानप्रसाद
पृष्ठ 173

22. श्रीमद् वाल्मीकीय रामायण / अरण्यकाण्डम् / 32 / 12
(प्रथम भाग)
टीकाकार पाण्डेय पं. रामनारायण दत्त शास्त्री 'राम'
पृष्ठ 565

23. वही / अरण्यकाण्डम् / 32 / 13 $\frac{1}{2}$
पृष्ठ 565

24. रामचरितमानस / लंकाकाण्ड / 84
टीकाकार पोद्दार हनुमानप्रसाद
पृष्ठ 862

25. वही / लंकाकाण्ड / 77
पृष्ठ 853

26. कवितावली / सुन्दरकाण्ड / 21
लाला भगवानदीन
पृष्ठ 43

27. रामचरितमानस / अरण्यकाण्ड / 22 / 2
टीकाकार पोद्दार हनुमानप्रसाद
पृष्ठ 649

28. वही / लंकाकाण्ड / 15 / 1-2
टीकाकार पोद्दार हनुमानप्रसाद
पृष्ठ 789

29. महाभारत / वनपर्व / 275 / 11
(द्वितीय खण्ड)
महर्षि वेदव्यास
अनुवादक पाण्डेय रामनारायणदत्त शास्त्री 'राम'
पृष्ठ 1717

30. रामचरितमानस / लंकाकाण्ड / 62
टीकाकार पोद्दार हनुमानप्रसाद
पृष्ठ 837

31. वही / लंकाकाण्ड / 63 / 4-5
पृष्ठ 838

32. वही / लंकाकाण्ड / 64
पृष्ठ 838

33. वही / लंकाकाण्ड / 79 / 2
पृष्ठ 856

34. वही / लंकाकाण्ड / 116 (घ)
पृष्ठ 904

35. वही / सुन्दरकाण्ड / 6 / 2-3
पृष्ठ 721

36. वही / सुन्दरकाण्ड / 45
पृष्ठ 757

37. श्रीमद् वाल्मीकीय रामायण / युद्धकाण्डम् / 18 / 33
(द्वितीय भाग)
अनुवादक पाण्डेय पं. रामनारायणदत्त शास्त्री 'राम'
पृष्ठ 1095

38. रामचरितमानस / सुन्दरकाण्ड / 48 / 5
टीकाकार पोद्दार हनुमानप्रसाद
पृष्ठ 760

39. वही / सुन्दरकाण्ड / 18 / 2
पृष्ठ 732

40. वही / बालकाण्ड / 182 / 1
पृष्ठ 174

41. श्रीमद् वाल्मीकीय रामायण / युद्धाकाण्डम् / 73 / 24
(द्वितीय भाग)
अनुवादक पाण्डेय पं. रामनारायणदत्त शास्त्री 'राम
पृष्ठ 1280

42. रामचरितमानस / लंकाकाण्ड / 75 / 1
टीकाकार पोद्दार हनुमानप्रसाद
पृष्ठ 851

43. वही / लंकाकाण्ड / 76
पृष्ठ 852

44. वही / लंकाकाण्ड / 5 / 3
पृष्ठ 779

45. वही / लंकाकाण्ड / 5 / 5
पृष्ठ 780

46. वही / लंकाकाण्ड / 13 / 4
पृष्ठ 787

47. श्रीमद् वाल्मीकीय रामायण / युद्धाकाण्डम् / 111 / 25
(द्वितीय भाग)
अनुवादक पाण्डेय पं. रामनारायणदत्त शास्त्री 'राम'
पृष्ठ 1399

48. रामचरितमानस / लंकाकाण्ड / 103 / 5-6
टीकाकार पोद्दार हनुमानप्रसाद
पृष्ठ 888-889

49. महाभारत / वनपर्व / 275 / 12
(द्वितीय खण्ड)
अनुवादक पाण्डेय पं. रामनारायणदत्त शास्त्री 'राम'
पृष्ठ 1717

50. श्रीमद् वाल्मीकीय रामायण / अरण्यकाण्डम् / 17 / 20
(प्रथम भाग)
अनुवादक पाण्डेय पं. रामनारायणदत्त शास्त्री 'राम'
पृष्ठ 532

51. रामचरितमानस / अरण्यकाण्ड / 20 / 4-5-6, 21 (क)
अनुवादक पोद्दार हनुमानप्रसाद
पृष्ठ 647-648

52. वही / अरण्यकाण्ड / 24 / 2
पृष्ठ 651

53. वही / अरण्यकाण्ड / 25 / 2
पृष्ठ 652

54. वही / बालकाण्ड / 187
पृष्ठ 179

55. वही / बालकाण्ड / 187 / 2
पृष्ठ 189

56. श्रीमद् वाल्मीकीय रामायण / बालकाण्डम् / 17 / 18
(प्रथम भाग)
अनुवादक पाण्डेय पं. रामनारायणदत्त शास्त्री 'राम'
पृष्ठ 66

57. वही / बालकाण्डम् / 17 / 25
(प्रथम भाग)
पृष्ठ 66

58. रामचरितमानस / उत्तरकाण्ड / 7 / 4
टीकाकार पोद्दार हनुमानप्रसाद
पृष्ठ 924

59. वही / उत्तरकाण्ड / 15 / 2-3
पृष्ठ 935

60. वही / लंकाकाण्ड / 117 / 2
पृष्ठ 905

61. श्रीमद् वाल्मीकीय रामायण / बालकाण्डम् / 17 / 16
(प्रथम भाग)
अनुवादक पाण्डेय पं. रामनारायणदत्त शास्त्री 'राम'
पृष्ठ 66

62. वही / युद्धकाण्डम् / 9 / 11
(द्वितीय भाग)
पृष्ठ 1071

63. रामचरितमानस / लंकाकाण्ड / 83 / 1-2
टीकाकार पोद्दार हनुमानप्रसाद
पृष्ठ 861

64. वही / सुन्दरकाण्ड / 32 / 4-5
पृष्ठ 745

65. वही / सुन्दरकाण्ड / 16 / 2
पृष्ठ 730

66. वही / सुन्दरकाण्ड / 12 / 5
पृष्ठ 727

67. कवितावली / उत्तरकाण्ड / 19
अनुवादक लाला भगवानदीन
पृष्ठ 94

68. रामचरितमानस / सुन्दरकाण्ड / 31 / 3
पृष्ठ 744

69. वही / लंकाकाण्ड / 23 (ग)
पृष्ठ 797

70. वही / लंकाकाण्ड / 37 / 5
पृष्ठ 813

71. वही / उत्तरकाण्ड / 19 (ख)
पृष्ठ 938

72. बरवे रामायण / किष्किन्धाकाण्ड / 35
अनुवादक सुदर्शनसिंह,
पृष्ठ 9

73. श्रीमद् वाल्मीकीय रामायण / बालकाण्डम् / 17 / 35
(प्रथम भाग)
अनुवादक पाण्डेय रामनारायणदत्त शास्त्री 'राम'
पृष्ठ 67

74. वही / उत्तरकाण्डम् / 34 / 37
(द्वितीय भाग)
पृष्ठ 1547

75. वही / किष्किन्धाकाण्डम् / 18 / 22 $\frac{1}{2}$
(प्रथम भाग)
पृष्ठ 722

76. रामचरितमानस / किष्किन्धाकाण्ड / 10
टीकाकार पोद्दार हनुमानप्रसाद
पृष्ठ 691

77. वही / किष्किन्धाकाण्ड / 10 / 3
पृष्ठ 691

78. वही / किष्किन्धाकाण्ड / 25 / 6-7
पृष्ठ 706

79. श्रीमद् वाल्मीकीय रामायण / अरण्यकाण्डम् / 50 / 27
(प्रथम भाग)
अनुवादक पाण्डेय पं. रामनारायणदत्त शास्त्री 'राम'
पृष्ठ 608

80. रामचरितमानस / अरण्यकाण्ड / 32
टीकाकार पोद्दार हनुमानप्रसाद
पृष्ठ 663

81. गीतावली / अरण्यकाण्ड / 13 / 1
अनुवादक मुनिलाल
पृष्ठ 241

82. रामचरितमानस / उत्तरकाण्ड / 61
टीकाकार पोद्दार हनुमानप्रसाद
पृष्ठ 976

83. अध्यात्म रामायण / युद्धकाण्ड / 3 / 61-62
अनुवादक मुनिलाल
पृष्ठ 262

84. रामचरितमानस / बालकाण्ड / 183 / 2
टीकाकार पोद्दार हनुमानप्रसाद
पृष्ठ 175

85. श्रीमद् वाल्मीकीय रामायण / युद्धकाण्डम् / 100 / 14
(द्वितीय भाग)
अनुवादक पाण्डेय पं. रामनारायणदत्त शास्त्री 'राम'
पृष्ठ 1367

86. रामचरितमानस / अरण्यकाण्ड / 27 / 5
(सटीक मोटा टाइप)
तुलसीदास
टीकाकार पोद्दार हनुमानप्रसाद
पृष्ठ 655

87. वही / उत्तरकाण्ड / 21 / 4
पृष्ठ 941

88. वही / सुन्दरकाण्ड / 4
पृष्ठ 719

89. वही / उत्तरकाण्ड / 15 / 4
पृष्ठ 935

90. वही / किष्किन्धाकाण्ड / 25 / 7
पृष्ठ 706

91. वही / लंकाकाण्ड / 3
पृष्ठ 777

92. वही / किष्किन्धाकाण्ड / 26 / 4
पृष्ठ 707

93. वही / उत्तरकाण्ड / 58 / 3
पृष्ठ 769

■ □ ■